क़ुरान और धार्मिक मतभेद

क़ुरान और धार्मिक मतभेद

अर्थात्

मौलाना अबुल-कलाम आज़ाद लिखित "तर्जुमानुल-क़ुरआन"

के एक अध्याय का हिन्दी अनुवाद

अनुवादक

सय्यद ज़हूरुल हुसैन हाशिमी,

भागलपुरी ।

दिल्ली :

तर्जुमानुल-क़ुरान कार्यालय

नं० १०, दरियागंज

सन् १९३३ ई०

मूल्य १) ।

Printed by
Mirza Abu'l-Fazl at the Minerva Press, Allahabad.

Published by the
Office of the Tarjumanu'l-Qur'an, Delhi.

तुममें से हर एक गिरोह के लिए हमने (अलग अलग) धार्मिक नियम और (अलग अलग) रास्ते ठहरा दिये हैं। अगर ख़ुदा चाहता तो तुम सब को एक ही संप्रदाय बना देता, लेकिन (उसने ऐसा नहीं किया) इसलिए कि जो कुछ तुम्हें दिया गया है उसी में तुम्हारी परीक्षा करे। पस नेकी की राह में एक दूसरे से आगे बढ़ निकलने की कोशिश करो। अंत में तुम सब को अल्लाह की तरफ लौटना है। फिर वह तुम्हें बतलायेगा कि जिन बातों में एक दूसरे से भिन्नता रखते थे उनकी अस्लीयत क्या है। — सूरा ५. ४८।

विषय-सूची

भूमिका

मुझे हज़ारीबाग़ जेल में मौलाना अबुलकलाम आज़ाद कृत उर्दू टीका और भाष्य के साथ क़ुरान पढ़ने का सौभाग्य हुआ। खेद है कि अभी तक पूरी पुस्तक छप कर नहीं निकली। और जो अंश छपा है उसी के देखने से ऐसी धारणा हुई कि यदि इस पुस्तक को हिन्दू पढ़ सकेंगे तो देश का बड़ा उपकार होगा।

मौलवी सैयद ज़हूरुल-हुसेन हाशिमी का विचार हुआ कि इसका वह अंश जिसमें इस्लाम का अन्य धर्म्मों के साथ सम्बन्ध दर्शाया गया है अविलम्ब हिन्दी में अनुवादित करके हिन्दू जनता के सामने रखा जाय। उन्होंने यह कार्य्य कुछ मित्रों के परामर्श और सहायता से आरम्भ भी कर दिया। कुछ दिनों में यह काम समाप्त हो गया, और मुझे भी उर्दू तथा हिन्दी प्रतियों के देखने का सुअवसर मिला। मेरा विश्वास है कि इसे पढ़ कर हिन्दीभाषी इस्लाम के महत्व और उसकी उदारता को समझ सकेंगे और बहुत सी ग़लतफ़हमियां जो फैली हुई हैं, दूर हो सकेंगी।

भारतवर्ष में हिन्दू-मुसलिम समस्या बहुत जटिल दीख पड़ती है। इसके बहुतेरे कारण हैं—ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनीतिक। दोनों जातियाँ एक दूसरे के धर्म्म के महत्त्व से अनभिज्ञ हैं और जानकारी प्राप्त करने की उन्हें विशेष सुविधा भी प्राप्त नहीं है।

ऐसी अवस्था में दोनों एक दूसरे के धर्म्मसम्बन्धी विचारों को सन्देह की दृष्टि से देखती हैं, और सामाजिक तथा धार्मिक रीतियों के कारण स्थान स्थान पर असहिष्णुता का प्रदर्शन करती हैं जिसका रूप कभी कभी अत्यन्त भयङ्कर और अमानुषिक हो जाया करता है।

इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि दोनों जातियों को इसका सुअवसर और प्रोत्साहन दिया जाय कि एक दूसरे के धर्म्म-सम्बन्धी विचारों की जानकारी प्राप्त करें। अविद्या और अज्ञान अनेक अनर्थों का कारण हुआ करता है, और आज भारतवर्ष की इस जटिल समस्या के हल करने का एक साधन इस अविद्या और अज्ञान का दूर करना है। यह इस प्रकार की पुस्तकों के प्रकाशन और प्रचार से दूर हो सकता है जैसी मौलाना अबुलकलाम आज़ाद साहिब ने लिखी है। हिन्दुओं में इस प्रकार का प्रयत्न एक दूसरे विद्वान् डाक्टर भगवान दास जी की लेखनीद्वारा हो रहा है।

सच पूछिए तो सभी धर्मों के सर्वोच्च सिद्धान्त थोड़े ही हैं और मिलते जुलते हैं। सारे झगड़े, आचार-व्यवहार रीति-नीति रस्म-रिवाज में भेद के कारण ही होते हैं। जैसा मौलाना साहिब ने दिखलाया है इनमें भेद होना अनिवार्य है, क्योंकि देश काल की विभिन्नता से और अलग अलग जातियों के बीच धर्म के प्रचारित होने से सभी बातों में समानता होना असम्भव था। जब ईश्वर के संसार में दो मनुष्य अथवा कोई दो चीजें ठीक एक दूसरे के

समान नहीं हैं और इस वैचित्र्य में भी सुन्दरता और शक्ति झलकती है तो धर्मों के सभी आचार-व्यवहार रस्म-रिवाज़ एक समान कैसे हो सकते हैं ? पर हमारी भूल यह है कि हम इन वाह्य आडम्बरों को—इन .फ़ुरूआत को—धर्म का मुख्य अङ्ग समझ बैठे हैं और इनके कारण एक दूसरे का सिर तोड़ कर ईश्वर के उन नियमों का गला घोटते हैं जो सब के लिए समान रूप से मान्य हैं।

आर्य-धर्म, जो आज हिन्दूधर्म के नाम से अधिक प्रचलित है, उन्हीं सिद्धान्तों को अनादि काल से मानता और प्रचारित करता आया है जिनको इस्लाम ने आज से १३५० वर्ष पूर्व फिर से प्रचारित किया। मौलाना आज़ाद साहिब ने प्रतिपादित किया है कि इस्लाम के दो ही मुख्य सिद्धान्त हैं—एक, ईश्वर में अटल विश्वास और दूसरा सदाचार का जीवन। आर्यग्रन्थों से इसी आशय के अनेक प्रमाण उद्‌धृत किये जा सकते हैं, और जो इस विषय का विशेष रूप से अध्ययन करना चाहेंगे उनको इसमें कोई कठिनाई नहीं होगी। यहाँ पर कुछ उद्धरण दिये जाते हैं जो इस विषय में दोनों धर्मों के सामञ्जस्य को प्रमाणित करते हैं।

एवमाचारतो दृष्ट्वा धर्मस्य मुनयो गतिम्।
सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगृहुः परम्॥

मनुस्मृति १। ११०

इस प्रकार मुनियों ने आचार से धर्म प्राप्त देखकर सब तपों के मूल आचार को ग्रहण किया है—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधोदशकं धर्मलक्षणम् ॥

मनु ६ । ८२

धैर्य्य, क्षमा, दम (अर्थात् मन को रोकना), अस्तेय (चोरी न करना), शौच (बाहर भीतर की शुद्धि), इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या (अर्थात् ब्रह्मविद्या) , सत्य और अक्रोध—ये दस धर्म्म के लक्षण हैं ।

अहिंसा सत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
एतं सामासिकं धर्मं चातुर्वर्ण्येऽब्रवीन्मनुः ॥

मनु १० । ६३

अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, पवित्रता और इन्द्रियनिग्रह, यह चारों वर्णों का संक्षिप्त धर्म मनु ने कहा है ।

सर्वेषां यः सुहृन्नित्यं सर्वेषां च हिते रतः ।
कर्म्मणा मनसा वाचा स धर्मं वेद जाजले ॥

महाभारत—शांतिपर्व २६१ । ९

हे जाजले ! उसी ने धर्म को जाना जो कर्म से, मनसे और वचन से सब का हित करने में लगा हुआ है और जो सभी का नित्य स्नेही है ।

श्रीमद्भगवद्गीता में तो बहुत से श्लोक मिलेंगे जो इस विषय को प्रतिपादित करते हैं । यहां केवल बारहवें अध्याय की ओर

ध्यान आकर्षित किया जाता है और उसी में से कुछ वाक्य दिये जाते हैं—

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःख सुखःक्षमी॥
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पित मनो बुद्धिर्योमद्भक्तः समे प्रियः॥
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्ष भयोद्वेगैः मुक्तो यः स च मे प्रियः॥
अनपेक्षः शुचिर्दक्षः उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥
यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥
समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्ण सुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः॥
तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः॥
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्धाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥

भ० गी० १२।

जो किसी प्राणी से भी द्वेष न करे, जो सब के साथ मित्रता का वर्त्ताव करे, जो दयालु हो, जो ममता का त्याग करे, जो अहंकार

से रहित हो, जो दुःख सुख को समान माने, जो क्षमाशील है, जो सदा संतोषी है, जिसने अपनी आत्मा को जीत लिया, जिसका निश्चय दृढ़ है, जिसने अपना मन और बुद्धि मुझमें (ईश्वर में) अर्पण कर दी है, जो मेरा भक्त है—ऐसा योगी मुझको प्यारा है।

जिससे लोग उद्विग्न नहीं होते, और जिसे लोगों से उद्वेग नहीं होता, जो हर्ष, क्रोध, भय, और घबराहट से मुक्त है—वह मुझे प्यारा है।

जो किसी से कुछ इच्छा नहीं रखता, जो पवित्र है, कुशल है, उदासीन है, किसी बा॰ का दुःख नहीं मानता, जिसने (काम्यफलों के) सब आरंभों को त्याग दिया है—ऐसा मेरा भक्त मुझे प्यारा है।

जो न हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न इच्छा करता है, जिसने भले और बुरे (दोनों तरह के कर्मफलों) का त्याग कर दिया है—ऐसा मेरा भक्त मुझे प्यारा है।

जो शत्रु और मित्र के साथ समान व्यवहार करता है, जो मान और अपमान, सर्दी और गर्मी, सुख और दुःख में समान रहता है, जो संगरहित (बेलौस) है, जिसके लिए निंदा और स्तुति बराबर है, जो मौनी (मितभाषी) है, जहाँ तहाँ से जो कुछ मिल जाय उसी से संतुष्ट रहता है, जिसका कोई रहने का स्थान नहीं, जिसकी बुद्धि स्थिर है—ऐसा मेरा भक्त मुझे प्यारा है।

जो श्रद्धा के साथ ईश्वरपरायण होकर इस धर्मामृत का ठीक ठीक सेवन करते हैं—ऐसे मेरे भक्त मुझे बहुत प्यारे हैं।

मौलाना ने एक विषय और भी प्रतिपादित किया है, और वह यह है कि ईश्वर ने समय समय पर सभी देशों में अपने पैग़म्बर भेजे हैं जिन्होंने धर्म की शिक्षा दी है। यह गीता के उन श्लोकों से भी प्रतिपादित होता है जो चौथे अध्याय में आये हैं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

गी० ४।७, ८

हे अर्जुन! जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब तब मैं अवतार लेता हूँ। सज्जनों की रक्षा, दुर्जनों के विनाश और धर्म की पुनःस्थापना के लिए मैं युग युग में पैदा होता हूँ।

मैं आशा करता हूँ कि हिन्दीभाषी इस छोटी पुस्तिका से लाभ उठावेंगे और मौलाना अबुलकलाम आज़ाद कृत क़ुरान के पूरे भाष्य के हिन्दी संस्करण का इन्तिज़ार करेंगे। मैं यह भी आशा करता हूँ कि पूरे भाष्य को पढ़ने की उनकी यह इच्छा शीघ्र ही पूरी होगी।

राजेन्द्रप्रसाद

हज़ारीबाग़ सेन्ट्रल जेल,
आषाढ़ कृष्ण ५ सम्वत् १९८९

निवेदन

१९३२ ई० को जनवरी में जब सत्याग्रह आन्दोलन शुरू हुआ, तो बिहार प्रान्त के अन्य देश-सेवकों के साथ मुझे भी गिरफ़्तार होने की इज़्ज़त हासिल हुई। मैं हज़ारीबाग़ जेल भेजा गया। वहाँ मुझे अभी थोड़े ही दिन बीते थे कि मौलाना अबुलकलाम आज़ाद का "तर्जुमानुल-.कुरआन" यानी .कुरान का उर्दू भाष्य छप कर प्रकाशित हुआ, और उसकी एक प्रति जेल के अन्दर मुझे मिल गई। यह पुस्तक कैसी है और इसके अन्दर क्या अमूल्य रत्न भरे हैं, इसके लिए सिर्फ़ इतना कह देना काफ़ी है कि यह मौ० अबुल-कलाम आज़ाद के मस्तिष्क और क़लम से निकली है। मौलाना आज़ाद आज हिन्दुस्तान के मुसलमान लेखकों में सर्वोच्च श्रेणी के लेखक माने जाते हैं, और उनके क़लम से निकली हुई एक एक पंक्ति उस श्रद्धा तथा प्रतिष्ठा के साथ पढ़ी जाती है जो उर्दू भाषा के अन्य किसी लेखक को प्राप्त नहीं है।

जब इस पुस्तक की जेल के दोस्तों में चर्चा हुई, तो सब ने बड़े शौक़ से इसका अध्ययन किया, और एक साथ सब को ख़्याल हुआ कि अगर इसका हिन्दी में अनुवाद हो जाय, तो इससे देश तथा साहित्य की बड़ी सेवा होगी।

हिन्दुस्तान में एक हज़ार वर्ष से हिन्दुओं और मुसलमानों का साथ है। परमात्मा की यही इच्छा हुई कि दोनों धर्मों के मानने-

वाले एक ही देश में बसें, और एक ही देश को अपनी मातृभूमि समझें। इसलिए ज़रूरी था कि हिन्दू मुसलमान एक दूसरे के धर्म्म और मज़हब को भली भांति समझते और एक दूसरे का आदर करते। लेकिन बद-नसीबी से मौजूदा ज़माने में पृथकत्व और और बेगानगी की कुछ ऐसी हवा चल गई है कि एक दूसरे को समझना तो दूर रहा, एक दूसरे के ख़िलाफ तरह तरह के पक्षपात और ग़लतफ़हमियाँ दोनों ओर के लोगों में पैदा हो गई हैं, जिसका परिणाम यह है कि एकता की लगातार कोशिश करने पर भी हिन्दू-मुसलिम नाइत्तिफ़ाक़ी और वैमनस्य रोज बरोज़ बढ़ते ही चले जाते हैं।

मुसलमानों ने अपने साहित्य के उत्कर्ष काल में हिन्दुस्तान के धार्मिक ग्रन्थों की खोज की थी। उन दिनों अबूमअशर फ़लकी, अबूरैहान अल-बीरूनी, और शहरिस्तानी जैसे भारतीय साहित्य के पंडित पैदा हुए। फिर जब हिन्दुस्तान में इस्लामी राज्य क़ायम हो गया तो सुलतान फ़ीरोजशाह, ज़ैनुल-आबिदीन, अकबर, और दारा-शिकोह जैसे साहित्यप्रेमी बादशाहों ने हिन्दू धर्म्मग्रन्थ और हिन्दू साहित्य की पुस्तकें फ़ारसी भाषा में अनुवाद कराई। इसी तरह हिन्दुओं में भी इस्लामी साहित्य के जाननेवाले पैदा हुए जिन्होंने इस्लामी अध्यात्म पर बहुत सी किताबें लिखीं जो आज तक मौजूद हैं। इस्लाम और हिन्दू धर्म्म के इसी पारस्परिक प्रेम और मेल जोल का परिणाम था जिसने कबीर और गुरु नानक की अमूल्य शिक्षाओं का रूप धारण किया। लेकिन अफ़सोस है कि अब

यह बातें स्वप्नवत् हो गई हैं। बेगानगी की इतनी चौड़ी नदी दोनों धर्म्मों के माननेवालों के बीच बहने लगी है कि एक किनारे पर बसनेवाला दूसरे किनारे की कोई ख़बर ही नहीं रखता।

वर्षों से मेरा विश्वास है कि हिन्दू-मुसलिम एकता सिर्फ़ राजनीतिक शिक्षा द्वारा क़ायम नहीं हो सकती। वास्तविक कारण जिसने आपस के प्रेम की राह में रोड़े बिछा दिये हैं धार्म्मिक संकीर्णता और मज़हबी पक्षपात है। जब तक यह चीज़ दूर नहीं होगी, और सची धार्मिक शिक्षा के द्वारा लोग एक दूसरे से इत्तिफ़ाक़ और प्रेम न अनुभव करेंगे, केवल राजनीतिक एकता का उपदेश कुछ फ़ायदा न करेगा। सांस्कृतिक (Cultural) एकता ही वास्तविक एकता है।

इस लक्ष्य तक पहुँचने की सिर्फ एक ही राह है, और वह यह है कि इस तरह के सहानुभूतियुक्त धार्मिक अनुसन्धान के परिणामों को साधारण जनता में खूब प्रचार किया जाय, और कोशिश की जाय कि मुसलमान हिन्दूधर्म को उसके असली रूप में देख सकें, और हिन्दू इस्लाम की वास्तविक शिक्षा से जानकारी प्राप्त कर सकें। जब दोनों गिरोह एक दूसरे के धर्म्म को पूर्ण रूप से समझ लेंगे तो पारस्परिक द्वेषभाव तथा वैमनस्य अनायास दूर हो जायगा।

यही विचार था कि जो उस समय जेल में तमाम दोस्तों के सामने आया, और उनके परामर्श से मैंने "तर्जुमानुल-क़ुरान" का हिन्दी अनुवाद करना शुरू कर दिया।

उस वक्त चूँकि पूरी किताब का अनुवाद करना कठिन था। इसलिए आपस की सलाह से तै पाया कि पहले इसके उस भाग का अनुवाद किया जाय जिसमें समस्त धर्मों के मूल सिद्धान्त के एक होने की व्याख्या की गई है। अनुवाद प्रारम्भ कर दिया गया और मेरी रिहाई से पहले वह समाप्त भी हो गया।

उर्दू से हिन्दी में अनुवाद करना यद्यपि कठिन कार्य नहीं है, क्योंकि भाषा एक ही है, फ़र्क़ सिर्फ़ इतना ही है कि उर्दू में फ़ारसी और अरबी के शब्द अधिक आते हैं और हिन्दी में संस्कृत के, और वह फ़ारसी लिपि में लिखी जाती है, यह देवनागरी में, तथापि "तर्जुमानुल-क़ुरआन" के अनुवाद का काम इतना सहज न था। बड़ी मुश्किल जो इस काम में पेश आई वह मौ० अबुलकलाम के उर्दू स्टाइल को हिन्दी भाषा में खपाना था। जो लोग आज कल के उर्दू साहित्य से जानकारी रखते हैं, वे जानते हैं कि मौ० अबुलकलाम आज़ाद ने उर्दू में एक नई लेखशैली पैदा की है, जिसका इस समय तक उनके सिवा कोई दूसरा मास्टर नहीं। उनकी लेखशैली और ओज को हिन्दी में क़ायम रखना अत्यन्त कठिन था। जहां तक मेरी शक्ति में था मैंने अपने क़ाबिल दोस्तों की मदद से इसकी कोशिश की, लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि मुझे इसमें सफलता नहीं मिली। यदि उनके लेख का भाव ही मेरे द्वारा ठीक ठीक तौर पर हिन्दी में आ सका हो तो इसी में मैं अपना सौभाग्य समझूँगा।

अनुवाद यद्यपि मेरे क़लम से हुआ है, लेकिन असल में मुझसे ज़्यादा यह मेरे जेल के दोस्तों और पूज्य महानुभावों की मेहनत और योग्यता का परिणाम है, और मेरा फ़र्ज़ है कि जिन महानुभावों ने ख़ुशी और उत्साह के साथ हिन्दी अनुवाद की पुनरावृत्ति में मेरी मदद की है उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करूँ। मेरे मुहतरम लीडर बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी, बिहार प्रान्तीय-कांग्रेस कमेटी के सहकारी मन्त्री बाबू मथुराप्रसाद जी, श्री बा० नारायण जी गौरैया कोठी सारन (भूतपूर्व सदस्य ऐसेम्बली), काशी विद्यापीठ के श्री राजवल्लभ जी, और मेरे दिली दोस्त बाबू मोती लाल जी देवघरवाले, इस काम में मदद देते रहे। इन महानुभावों की सहायता के बिना मेरा इस कार्य को सम्पूर्ण करना कठिन होता।

विशेषत: मुझे बाबू राजेन्द्रप्रसाद जी का शुक्रिया अदा करना है, जिन्होंने पूरे अनुवाद को देखा, और अपने क़लम से इसकी भूमिका लिख दी।

जब मैं मौलाना अबुलकलम आज़ाद की ख़िदमत में किताब का मसौदा लेकर कलकत्ते आया तो पण्डित बनारसीदास जी चतुर्वेदी, सम्पादक 'विशाल भारत,' से मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके दर्शन ने मेरे हृदय में उत्साह की लहर दौड़ा दी। उन्होंने अपने अमूल्य परामर्श और हर प्रकार की सहायता का वचन देकर मुझे प्रेमसूत्र में बांध लिया। मैं उनका अत्यन्त ऋणी हूँ।

उनकी ओर कृतज्ञता प्रकट कर सकना मेरे लिए असम्भव है—एक हृदय है जो मैं उनकी सेवा में अर्पण करता हूँ।

अब मैं पाठकों का ध्यान चन्द आवश्यक बातों की ओर आकर्षित करना चाहता हूं।

(१) इस ग्रन्थ में क़ुरान की शिक्षा जो कुछ प्रकट की गई है, वह एक ऐसे विख्यात विद्वान् की लेखनी से निकली है जो आज न सिर्फ़ हिन्दुस्तान के मुसलमानों में बल्कि बाहर की इसलामी दुनियाँ में भी इस्लाम के धार्म्मिक ग्रन्थों का एक बहुत बड़ा पण्डित माना जाता है। क़ुरान के तत्त्वज्ञान के उन जैसे ज्ञाता हिन्दुस्तान में अत्यन्त कम विद्यमान हैं, यह बात विद्वन् समाज में निर्विवाद मान ली गई है। भारतीय मुसलमानों में एक बड़ी संख्या ऐसे लोगों की मौजूद है जो राजनीतिक मामले में मौलाना से सहमत नहीं हैं, लेकिन वे भी इस्लाम के धार्मिक साहित्य और विशेष कर क़ुरान के विषय में मुक्तकण्ठ से मौलाना को प्रमाण मानते हैं। इसलिए यह कहना अत्युक्ति न होगा कि प्रामाणिकता की दृष्टि से इस पुस्तक का स्थान बहुत ऊँचा है।

(२) आज कल प्रत्येक धर्म के अनुयायियों में नवीन विचार के कुछ लोग ऐसे पैदा हो गये हैं जो प्राचीन धर्मग्रन्थों के अर्थों को खींच तान कर आधुनिक युग के नवीन आविष्कारों से मिला देना चाहते हैं। वेद, तौरात, इंजील और क़ुरान के बारे में इस दृष्टि से बहुत कुछ कहा जा चुका है, और कई लोग तो इतनी दूर चले गये

हैं कि उनके नज़दीक साइन्स के सभी नये नये आविष्कार और उसकी तरक्कियां भी वेद, तौरात, इंजील और .कुरान में मौजूद हैं !

लेकिन मौलाना अबुलकलाम आज़ाद इस ख्याल के विरोधी हैं। उन्होंने स्वयं "तर्जुमानुल-.कुरान" की भूमिका में लिखा है कि इस तरह की कोशिश निरर्थक ही नहीं है बल्कि दियानतदारी और सच्चाई का .खून करना भी है। अगर हम जानकारी और सच्चाई के साथ धार्मिक खोज करना चाहते हैं तो हमें चाहिए कि धार्मिक ग्रन्थों का बिल्कुल निष्पक्ष होकर अध्ययन करें, और उनका वही मतलब लें जो उनकी भाषा और वाक्यों का बिना खींच तान के हो सकता है, और जैसा उनके माननेवालों ने हमेशा समझा है।

यही वजह है कि वह जो कुछ लिखते हैं उसके साथ ही .कुरान की असल आयत दे देते हैं, ताकि हर व्यक्ति .खुद फ़ैसला कर ले कि जो मतलब पेश किया गया है, वह असल .कुरान में मौजूद है या नहीं।

(३) मौलाना ने .कुरान की शिक्षा को बतलाते हुए यह सिद्धान्त पेश किया है कि समस्त धर्मों का मूलतत्त्व एक ही है, एक ही तरह पर सारी क़ौमों और मुल्कों को ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त हुआ है, और सभी तरीके असल में सच हैं। अगर सब धर्मों के माननेवाले इसको ठीक तौर पर समझ लें, तो धर्म्म का सारा झगड़ा एक क्षण में खतम हो जाय और संसार को उसकी वह खोई हुई सम्पत्ति मिल जाय जिसके बिना कभी अमन और

शांति स्थापित नहीं हो सकती। बद्-नसीबी से आज हमारे देश में सब से अधिक अज्ञानता इसी विषय की है, और मुल्क का सब से बड़ा सेवक वह है जो इस हक़ीकत को लोगों के दिलों में उतार दे।

अफ़सोस यह है कि इस क़िस्म की किताबों को आम तौर पर प्रकाशित करने और उनके प्रचार करने का हमारे मुल्क में कोई इन्तिज़ाम नहीं। लोग दूसरे दूसरे कामों के पीछे पड़े हैं, लेकिन इस काम के लिए जो सारे कामों की जड़ है, किसी को फ़िक्र नहीं। आवश्यकता थी कि मौलाना आज़ाद की यह पुस्तक हज़ारों की संख्या में मुसलमानों के बीच बांटी जाती, और उसी तरह उसका हिन्दी अनुवाद भी हिन्दू भाइयों में बांटा जाता। यदि इस प्रकार का साहित्य देश के शिक्षित लोगों में वितरण हो सकता, तो फिर थोड़े समय के अन्दर देश का वायुमण्डल ही बदल जाता और उसके सारे दुःख दूर हो जाते। हमारे मुल्क का मुख्य रोग असली धार्मिक सिद्धान्तों की अज्ञानता है। जब तक इसका इलाज नहीं होता, तब तक कोई राजनीतिक समझौता (पैक्ट) या सुधार हमारी इस मातृभूमि को शान्ति प्रदान करने में समर्थ न हो सकेंगे।

ख़ाकसार—

ज़हूरुल हुसैन हाशिमी भागलपुरी

सेन्ट्रल जेल, हज़ारीबाग़।

१ । हिदायत (ज्ञान-विकास) ।

हिदायत

हिदायत का अर्थ है पथ-प्रदर्शन, राह दिखाना, या राह पर लगा देना। अब हम हिदायत के उन भिन्न भिन्न दरजों और क़िस्मों पर नज़र डालना चाहते हैं जिनका ज़िक्र क़ुरान में आया है। इनमें 'वही' (ईश्वर-प्रेरणा) और 'नबुव्वत' (ईश्वरीय आदेशों का प्रचार), इन दोनों का एक ख़ास दरजा है।

उस पालनकर्त्ता परमात्मा ने जिस तरह सब प्राणियों को उपयुक्त शरीर और शक्तियाँ प्रदान की हैं उसी तरह उनके पथ-प्रदर्शन के लिए भी स्वाभाविक साधन पैदा कर दिये हैं। यही स्वाभाविक पथ-प्रदर्शन भूत-मात्र को जीवित रहने और अपने जीवन के आधार ढूँढ़ने के मार्ग पर लगाता है और उन्हें जीवन के आवश्यक साधनों की खोज में प्रवृत्त करता है। अगर यह स्वाभाविक पथ-प्रदर्शन मौजूद न होता तो असम्भव था कि कोई भी प्राणी जीवन और उसे क़ायम रखने का सामान मुहैया कर सकता। क़ुरान ने इसी सच्चाई की ओर बार बार ध्यान दिलाया है। वह कहता है कि भूतमात्र के जन्म से लेकर उसके परिपक्व होने तक कई दरजे हैं, जिनमें आख़िरी दरजा हिदायत का है। सूरा ८७ में क्रमानुसार चार दरजों का ज़िक्र आया है।

الذی خلق فسوی و الذی قدر فهدی

वह प्रतिपालक जिसने हर चीज़ पैदा की, फिर उसे दुरुस्त किया, फिर हर एक के लिए उसका क्षेत्र निश्चित कर दिया, और फिर उसके सामने (कर्म का) पथ खोल दिया। (सूरा ८७, आयत २)

अर्थात् प्रत्येक सम्भूत पदार्थ की चार अवस्थाएँ हैं। सृष्टि (तख़लीक़), दुरुस्ती (तसवीय्या), क्षेत्र-निर्देश (तक़दीर), और पथ-प्रदर्शन (हिदायत)।

सृष्टि का अर्थ है अव्यक्त के व्यक्त होना। दुरुस्ती (तसवीय्या) का अर्थ है हर चीज़ को जिस तरह होना चाहिए ठीक उसी तरह उसे दुरुस्त करना या सजाना। तक़दीर का अर्थ क्षेत्र निश्चित करना है। हिदायत यानी पथ-प्रदर्शन का अर्थ है प्रत्येक प्राणी के लिए जीवन और उसके साधन के मार्गों का निर्देश करना। जैसे, पक्षी की योनि को ही लीजिए। पक्षी के अस्तित्व का व्यक्त होना उसकी सृष्टि (तख़लीक़) है। उसकी भीतरी और बाहरी शक्तियों का इस प्रकार विकसित होना जिससे उसमें शारीरिक संगठन और सामंजस्य आ जाय दुरुस्ती (तसवीय्या) है। उसकी भीतरी और बाहरी शक्तियों की क्रिया के लिए एक क्षेत्र या सीमा बांध देना, जिससे वह बाहर न जा सके, तक़दीर है। मसलन्,

पक्षी हवा में ही उड़ेंगे ; मछलियों की तरह पानी में तैरेंगे नहीं। और उनमें अन्त:-प्रवृत्ति (वुजदान) और इन्द्रियों (हवास) की रोशनी पैदा होना जिससे उनको अपना जीवन और अस्तित्व कायम रखने का ज्ञान प्राप्त होता है और जिससे वे जीवन के साधन ढूँढ़ते और प्राप्त करते हैं, हिदायत यानी पथ-प्रदर्शन है।

क़ुरान कहता है कि ईश्वर की पालनशक्तिकी सार्थकता इसी में थी कि जिस तरह उसने हर एक प्राणी को उसका स्थूल रूप प्रदान किया, भीतरी और बाहरी शक्तियाँ दीं, उसका कर्मक्षेत्र निश्चित कर दिया, उसी तरह उसके लिए हिदायत यानी पथ-प्रदर्शन के साधन भी प्रस्तुत कर दे।

ربنا الذی اعطی کل شیء
خلقه ثم هدی

हमारा प्रतिपालक वह है जिसने हर चीज़ को रूप देकर उसके सामने उसका कर्मक्षेत्र खोल दिया। (सू० २०, आ० ५२)

हज़रत इब्राहीम और उनकी क़ौम के लोगों में जो बात चीत हुई थी, क़ुरान में उसका स्थान स्थान पर उल्लेख है, उसमें इब्राहीम अपने विश्वास की घोषणा करते हुए कहते हैं—

و اذ قال ابراهیم لابیه و
قومه اننی براء مما تعبدون الا
الذی فطرنی فانه سیهدین

और जब इब्राहीम ने अपने पिता और अपनी क़ौम के लोगों से कहा था कि (स्मरण रखो) तुम जिन (देवताओं) की

उपासना करते हो, उनसे मुझे कोई सरोकार नहीं। मेरा सम्बन्ध तो सिर्फ उस प्रभु से है जिसने मुझे पैदा किया और वही मेरा पथ-प्रदर्शक होगा। (सू० ४३, आ० २५)

"अल्लज़ी फ़तरनी फ़इन्नहू सयहदीन," यानी, जिस सृष्टिकर्त्ता ने मुझे शरीर और अस्तित्व प्रदान किया, अवश्य ही उसने मेरी हिदायत का सामान भी पैदा कर दिया होगा। सूरा २६ में यही बात अधिक विस्तार से बयान की गई है।

الذى خلقنى فهو يهدين
والذى هو يطعمني و يسقين
و اذا مرضت فهو يشفين

जिस प्रतिपालक ने मुझे पैदा किया है वही मुझे हिदायत करेगा, और वही है जो मुझे खिलाता और पिलाता है और जब बीमार हो जाता हूं तो मुझे चंगा करता है। (सू० २६, आ० ७९)

यानी जिस प्रतिपालक की पालनशक्ति ने मेरे जीवन की सभी आवश्यकताओं का सामान कर दिया है, जो मुझे भूख मिटाने के लिए भोजन, प्यास बुझाने के लिए पानी, और अस्वस्थ हो जाने पर स्वास्थ्य प्रदान करता है, उसके लिए यह कैसे सम्भव है कि मुझे पैदा करके उसने मेरी हिदायत का सामान न किया हो?

अगर उसने मुझे पैदा किया है तो यह निश्चय है कि वही खोज और प्रयत्न मे मेरा पथ-प्रदर्शन भी करेगा। सूरा ३७ में यही मतलब इन शब्दों में जाहिर किया गया है—

انی ذاهب الی ربي سيهدين

मैं (सब ओर से हट कर) अपने परवरदिगार की ओर जाता हूं, वही मेरी हिदायत करेगा। (सू० ३७, आ० ९७)

आयत के अन्दर "रब्बी" शब्द पर ध्यान दीजिए। वह मेरा "रब्ब" यानी पालक है। और जब वह रब्ब है तो जरूरी है कि वही मेरे लिए कर्म का मार्ग भी खोल दे।

हिदायत के पहले तीन दरजे।

हिदायत के भी कई दरजे हैं जिन्हें हम प्राणियों में अनुभव करते हैं। सबसे पहला दरजा अन्त:प्रवृत्ति (वुजदान) का है। अन्त:प्रवृत्ति से तात्पर्य जीवों के अन्दर की स्वाभाविक और आन्तरिक प्रेरणा है। हम देखते हैं कि बच्चा पैदा होते ही अपने आहार के लिए रोने लगता है और बिना किसी बाहरी प्रेरणा के माँ का स्तन मुंह में लेकर पीने लगता और अपना आहार ग्रहण करने लगता है।

अन्त:प्रवृत्ति (वुजदान) के बाद इंद्रिय-ज्ञान (हवास) की हिदायत का दरजा है, और वह इससे ऊँचा है। इससे हमको

देखने, सुनने, चखने, छूने और सूँघने की शक्ति प्राप्त होती है, और इन्हीं के ज़रिये हम बाहर की चीज़ों का ज्ञान प्राप्त करते हैं।

स्वाभाविक हिदायत के यह दोनों दरजे मनुष्य और पशु सबके लिए हैं। परन्तु हम देखते हैं कि मनुष्य के लिए हिदायत का एक तीसरा दरजा भी मौजूद है, और वह अक़्ल यानी बुद्धि की हिदायत है। इस तीसरी हिदायत ने ही मनुष्य के लिए अपरिमित उन्नति का द्वार खोल दिया है जिसके कारण उसने पृथ्वी के जीवों में सबसे अधिक उन्नत प्राणी का पद प्राप्त कर लिया है।

अन्तःप्रवृत्ति (वुजदान) मनुष्य में खोज और प्रयत्न का उत्साह पैदा करती है। इन्द्रियाँ (हवास) उसके लिए ज्ञान का संचार करती हैं, और बुद्धि परिणाम और व्यवस्था निश्चित करती है।

पशुओं को इस आख़िरी दरजे की आवश्यकता न थी; इसलिए वे पहले दोनों दरजे, अर्थात् अन्तःप्रवृत्ति और इंद्रिय-ज्ञान, तक ही रह गये। लेकिन मनुष्य को यह तीनों दरजे प्राप्त हुए।

बुद्धि का तत्त्व क्या है ? वास्तव में यह उसी शक्ति कि उन्नत अवस्था है जिसने पशुओं में अन्तःप्रवृत्ति और इंद्रिय-ज्ञान का दीपक प्रज्वलित किया है। जिस तरह मानव-शरीर पार्थिव शरीरों में सबसे अधिक उन्नत है उसी तरह उसकी आन्तरिक शक्ति भी अन्य सभी आन्तरिक शक्तियों से बढ़ी चढ़ी है। जीव की वह चेतनशक्ति जो वनस्पति में अप्रकट और पशु की अन्तःप्रवृत्ति

और उसके इंद्रियज्ञान में प्रकट थी, वही मनुष्य में पहुँचकर पूर्णता को प्राप्त हुई और बुद्धि-तत्त्व कहलाने लगी।

हम देखते हैं कि स्वाभाविक हिदायत के इन तीनों दरजों में से हर एक की अपनी विशेष सामर्थ्य और उसका एक विशेष कार्यक्षेत्र है, जिससे वह आगे नहीं बढ़ सकता। अगर उस दरजे से ऊँचा दूसरा दरजा मौजूद न होता तो हमारी आन्तरिक शक्तियाँ उस सीमा तक उन्नत न हो सकतीं जिस सीमा तक कि अब हमारी ही आन्तरिक प्रेरणा से वे उन्नति कर रही हैं।

अन्तःप्रवृत्ति हम में खोज और प्रयत्नशीलता उत्पन्न कर हमें जीवन की आवश्यकताओं की प्राप्ति की ओर लगाती है, लेकिन हमारे भौतिक शरीर के बाहर जो कुछ मौजूद है उसका ज्ञान हमें नहीं कराती। यह काम इन्द्रियों का है। कान सुनता है, आँख देखती है, नाक सूंघती है, जिह्वा स्वाद लेती है, और हाथ स्पर्श करता है, और इस तरह हम अपने शरीर से बाहर के समस्त इन्द्रिय-ग्राह्य पदार्थों का ज्ञान प्राप्त करते हैं। परन्तु यह इन्द्रिय-ज्ञान एक ख़ास हद तक ही काम दे सकता है, उससे आगे नहीं बढ़ सकता। आँख देखती है, मगर सिर्फ़ उसी हालत में जब कि देखने की सब शर्तें मौजूद हों। अगर किसी एक भी शर्त का अभाव हो—जैसे, प्रकाश न हो, या फ़ासला अधिक हो—तो हम आँख रहते हुए भी किसी पदार्थ को साक्षात् नहीं देख सकते। इसके अतिरिक्त इन्द्रियाँ चीज़ों का सिर्फ़ आभास करा सकती हैं, पर केवल इसी से काम नहीं चलता। हमें आवश्यकता होती है

नतीजे निकालने की, उन्हें परखने की, उनसे अहकामात, यानी व्यवस्था, स्थिर करने की, और सार्वभौमिक नियम प्रतिपादन करने की। यह सब काम बुद्धि का है। बुद्धि इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त हुए ज्ञान को तरतीब देती है और उनसे सार्वभौमिक नतीजे और व्यवस्थाएँ स्थिर करती है।

जिस तरह अन्तःप्रवृत्ति के काम के पूरा करने के लिए इन्द्रियों और इन्द्रियग्राह्य पदार्थों की आवश्यकता है उसी तरह इन्द्रियों के काम की दुरुस्ती और निगरानी के लिए बुद्धि की ज़रूरत है। इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान केवल अपूर्ण ही नहीं वरन् प्रायः भ्रामक और मिथ्या भी होता है। एक बड़ा भारी गुम्बद अथवा कोई विशाल पदार्थ दूर से देखने पर हमें छोटे से काले बिन्दु से अधिक नहीं दिखाई देता। हम बीमारी की हालत में शहद खाते हैं और वह हमारी ज़बान के बिगड़ जाने से हमको कड़वा मालूम पड़ता है। पानी में सीधी लकड़ी की परछाईं हमें टेढ़ी देख पड़ती है। प्रायः बीमारी के कारण कान बजने लगते हैं और ऐसी आवाज़ें सुनाई देती हैं जिनका बाहर कोई अस्तित्व नहीं होता। अगर इन्द्रियों के ऊपर एक और शक्ति अर्थात् बुद्धि न होती तो इन्द्रियों की अपूर्णता के कारण सच्चाई को जान सकना हमारे लिए असम्भव हो जाता। परन्तु ऐसी अवस्थाओं में बुद्धि आ मौजूद होती है और इन्द्रियों की असमर्थता में हमारा पथ-प्रदर्शन करती है। इस बुद्धि के द्वारा ही हम जान लेते हैं कि सूर्य एक महान् और विशाल पिण्ड है, चाहे हमारी आँख उसे एक

सुनहरी थाली के बराबर ही क्यों न देखे। इस बुद्धि से हम जान लेते हैं कि शहद वास्तव में मीठा है, चाहे हमारी स्वादेन्द्रिय के बिगड़ जाने से वह हमें कड़वा ही क्यों न मालूम पड़े। इसी तरह बुद्धि बतलाती है कि कभी कभी खुश्की बढ़ जाने के कारण कान बजने लगते हैं और इस हालत में जो आवाज़ सुनाई देती है वह बाहर की नहीं बल्कि हमारे ही दिमाग़ की गूंज है।

हिदायत का चौथा दरजा

जिस तरह अन्तःप्रवृत्ति के बाद हमें इन्द्रियों की ओर से हिदायत मिलती है—क्योंकि अन्तःप्रवृत्ति एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती—और जिस तरह इन्द्रियों के बाद बुद्धि प्रकट हुई, क्योंकि इन्द्रियाँ भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती थीं, ठीक उसी तरह हम अनुभव करते हैं कि बुद्धि के बाद भी उससे आगे की हिदायत के लिए कोई उच्चतर शक्ति होनी चाहिए, क्योंकि बुद्धि भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती और बुद्धि के कार्यक्षेत्र के बाद भी एक विशाल क्षेत्र बाक़ी रह जाता है। बुद्धि का कार्य-क्षेत्र जैसा और जितना है वह सब इन्द्रियज्ञान की परिधि में सीमित है, यानी बुद्धि सिर्फ उसी हद तक काम दे सकती है जिस हद तक हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ जानकारी करा सकें। परन्तु हमारे इन्द्रियज्ञान की सीमा के आगे क्या है? उस परदे के पीछे क्या है जिसके आगे हमारी इन्द्रियों की पहुँच नहीं है? यहाँ पहुँच कर बुद्धि असमर्थ और बेकार हो जाती है, बुद्धि की हिदायत आगे हमें कोई प्रकाश नहीं पहुँचा सकती।

जहाँ तक मनुष्य के क्रियात्मक जीवन का सम्बन्ध है बुद्धि उस के पथ-प्रदर्शन के लिए न तो हर हाल में काफ़ी है और न हर हाल में प्रभावोत्पादक ही। मनुष्य का मन तरह तरह की वासनाओं और तरह तरह के भावों में इस तरह उलझा हुआ है कि जब कभी बुद्धि और वासनाओं के बीच संघर्ष होता है तो विजय प्रायः वासनाओं ही की होती है। बुद्धि हमें अनेक बार विश्वास दिलाती है कि अमुक कार्य हानिकर और घातक है, लेकिन वासनाएँ हमें प्रेरित करती हैं और हम उस काम से अपने को रोक नहीं सकते। बुद्धि की बड़ी से बड़ी दलील भी ऐसा नहीं कर सकती कि हम क्रोध की हालत में बेक़ाबू न हो जांय और भूख की हालत में हानिकर भोजन की ओर हाथ न बढ़ाएँ।

परमेश्वर की पालकता के लिए यदि यह आवश्यक था कि वह हमें अन्त:प्रवृत्ति के साथ साथ ज्ञानेन्द्रियाँ भी दे, क्योंकि हमारे पथ-प्रदर्शन में अन्त:प्रवृत्ति एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती, तो क्या यह आवश्यक न था कि बुद्धि के साथ वह हमें कुछ और भी दे, क्योंकि बुद्धि भी एक ख़ास हद से आगे नहीं बढ़ सकती और मानवबुद्धि हमारे कर्मों की दुरुस्ती और उनके नियंत्रण के लिए पर्याप्त नहीं है?

क़ुरान कहता है कि यह आवश्यक था और इसी कारण उस दयालु परमात्मा ने मनुष्य के लिए हिदायत के चौथे दरजे का भी सामान कर दिया। इसी को क़ुरान 'वही' और 'नबुव्वत' का नाम देता है। इसीलिए हम देखते हैं कि क़ुरान में जहाँ तहाँ इन

चारों दरजों की हिदायत का जिक्र किया गया है, और इन्हें ईश्वर की पालकता का सर्वोत्तम प्रसाद माना गया है।

انا خلقنا الانسان من نطفة امشاج نبتليه فجعلناه سميعا بصيرا - انا هديناه السبيل اما شاكرا واما كفورا

हमने मनुष्य को रजवीर्य के मेल से पैदा किया (जिसे एक के बाद एक हम विविध अवस्थाओं में पलटते हैं), फिर हमने उसे सुननेवाला और देखनेवाला बना दिया। हमने उसके सामने कर्म करने का क्षेत्र खोल दिया है। अब यह उसका काम है कि चाहे वह कृतज्ञ हो चाहे कृतघ्न (अर्थात् या तो वह ईश्वरप्रदत्त शक्तियोंका सदुपयोग कर कल्याण और नेकी के मार्ग पर चले या इनसे कार्य न लेकर पथ-भ्रष्ट हो जाय)।—सू० ७६ आ० २

الم نجعل له عينين و لسانا و شفتين و هديناه النجدين

क्या हमने उसे एक छोड़ दो दो आँखें नहीं दी हैं (जिनसे वह देखता है), और क्या जीभ और होंठ नहीं दिये हैं (जो

बोलने के साधन हैं)। सू० ९०, आ० ६।

و جعل لكم السمع و الابصار و الافئدة لعلكم تشكرون

ईश्वर ने तुम्हें सुनने और देखने के लिए इन्द्रियाँ दीं, और सोचने के लिए दिल दिये (यानी बुद्धि दी), * जिसमें तुम कृतज्ञ हो (यानी ईश्वर की दी हुई शक्तियों का सदुपयोग करो)। —सू० १६, आ० ८०।

इन आयतों में और इसी तरह की अन्य आयतों में जगह जगह कई तरह की हिदायत की ओर इशारे किये गये हैं, जैसे इन्द्रियां और इद्रियग्राह्य पदार्थोंद्वारा हिदायत तथा बुद्धि और मननद्वारा हिदायत। किन्तु जहां कहीं मनुष्य के आत्मिक कल्याण वा अकल्याण का वर्णन किया गया है वहाँ 'वही' और 'नबुव्वत' द्वारा हिदायत से ही सम्बन्ध है। जैसे—

* अरबी में 'क़ल्ब' और 'फ़ुआद' के अर्थ केवल उस अङ्ग ही के नहीं हैं जिसे हम दिल कहते हैं, बल्कि इनका उपयोग 'अक़्ल' और 'फ़िक्र' के लिए भी होता है। .क़ुरान में जहां कहीं कान, आँख इत्यादि के साथ 'क़ल्ब' और 'फ़ुआद' कहा गया है उससे मतलब जौहरे अक़्ल (बुद्धितत्त्व) है।

ان علينا للهدى و ان لنا
للاخرة و الاولى

निस्सन्देह हमारा काम है कि हम हिदायत (पथप्रदर्शन) करें और निश्चय यह दोनों लोक (यह लोक और परलोक) हमारे ही हैं (इसलिए जो सीधी राह चलेगा उसके दोनों लोक सुधरेंगे और जो भटकेगा उसके दोनों लोक बिगड़ेंगे)। —सू० ९२, आ० १३।

و اما ثمود فهديناهم
فاستحبوا العمى على الهدى

बाक़ी रही समूद क़ौम, उसे भी हमने (सच्ची) राह दिखा दी थी, परन्तु उसने अन्धापन अख़्तियार किया और वह हमारी हिदायत (प्रदर्शितपथ) पर नहीं चली। (सू० ४१, आ० १६)

والذين جاهدوا فينا
لنهدينهم سبلنا - و ان الله
لمع المحسنين

और जिन लोगों ने हमारी राह में प्रयत्न और परिश्रम किया उनके लिए आवश्यक है कि हम भी अपनी राहें खोल दें। निस्सन्देह परमात्मा उन लोगों का साथी और सहायक है जो सदाचारी हैं। (सू० २९, आ० ६९)

२ । एक-धर्म ।

अल्-हुदा

इस सिलसिले में क़ुरान परमात्मा की एक विशेष हिदायत का वर्णन करता है और उसे 'अल्-हुदा' के नाम से पुकारता है। ('अल्' एक निर्देशात्मक शब्द है जिसका अर्थ 'वह' या 'विशेष' है और 'हुदा' का अर्थ 'हिदायत' है।)

قل ان هدي الله هو الهدي - و امرنا لنسلم لرب العالمين

(ऐ पैग़म्बर! उनसे) कह दो कि निस्सन्देह परमात्मा की हिदायत ही 'अल्-हुदा' है (यानी मनुष्य के लिए वही वास्तविक हिदायत है), और हम सब को (इस बात का) हुक्म दिया गया है कि समस्त सृष्टि के पालन-कर्ता के सम्मुख सिर झुका दें। (सू० ६, आ० ७०)

و لن ترضي عنك اليهود و لا النصاري حتي تتبع ملتهم - قل ان هدي الله هو الهدي

और (याद रखो) यहूदी तुमसे खुश न होंगे जब तक तुम उनके सम्प्रदाय की पैरवी न करो। यही हाल ईसाइयों का भी है।

(ऐ पैग़म्बर ! तुम उनसे कह
दो) 'अल्-हुदा' (यानी सच्ची
हिदायत तो वही है जो परमात्मा
की हिदायत है (इसलिए तुम्हारी
साम्प्रदायिक दलबन्दियों की मैं
कैसे पैरवी कर सकता हूँ ? मेरी
राह तुम्हारी गढ़ी हुई सम्प्रदायों
की राह नहीं है, बल्कि ईश्वर की
विश्वव्यापी हिदायत की राह है) ।
—सू० २, आ० १२० ।

यह 'अल्-हुदा' क्या है ? क़ुरान कहता है कि यह ईश्वर की वह विश्वव्यापी हिदायत है जो सृष्टि के आरम्भ से दुनिया में मौजूद है और बिना भेदभाव मनुष्यमात्र के लिए है । क़ुरान कहता है जिस तरह परमात्मा ने अन्तःप्रवृत्ति, इन्द्रियाँ और बुद्धि प्रदान करने में वंश और जाति, देश और काल का भेद नहीं रखा उसी तरह यह ईश्वरीय हिदायत भी हर प्रकार के भेदभाव और पक्षपात से ऊपर है । वह सब के लिए है और सब को दी गई है, इस एक हिदायत के सिवा और जितनी हिदायतें मनुष्यों ने समझ रखी हैं सब मनुष्य की गढ़ी हुई हैं । ईश्वर का बताया हुआ मार्ग तो सिर्फ़ एक ही है । इसीलिए क़ुरान हिदायत के उन समस्त रूपों से सर्वथा इनकार करता है जिन्होंने मानवसमाज को इस असल से हटाकर भिन्न भिन्न

सम्प्रदायों और टोलियों में बांट दिया है और कल्याण तथा मुक्ति की विश्वव्यापी सच्चाई को विशेष सम्प्रदायों और टोलियों की पैतृक सम्पत्ति बना लिया है। .कुरान कहता है कि मनुष्य की बनाई हुई यह अलग अलग राहें हिदायत की राह नहीं हो सकतीं। हिदायत की राह तो वही विश्वव्यापी हिदायत की राह है। और उसी विश्वव्यापी ईश्वरनिर्दिष्ट मार्ग को कुरान 'अल्-दीन' के नाम से पुकारता है जिसका अर्थ है मनुष्यमात्र के लिए सच्चा दीन। इसी का नाम .कुरान के शब्दों में 'इसलाम' है।

धार्मिक ऐक्य का तत्त्व

यह महान् तत्त्व .कुरान के सन्देश की सब से पहली बुनियाद है। .कुरान जो कुछ तत्त्व बतलाना और सिखाना चाहता है सब इसी पर अवलम्बित है। अगर इस तत्त्व से नज़र फेर ली जाय तो .कुरान के सन्देश का सारा ढाचा छिन्न भिन्न हो जाता है। परन्तु संसार के इतिहास की आश्चर्य-जनक प्रगति में यह भी एक विचित्र घटना है कि .कुरान ने इस तत्त्व पर जितना अधिक जोर दिया था उतना ही संसार की दृष्टि इससे फिरी रही। यहा तक कि आज .कुरान की कोई बात भी संसार की दृष्टि से इस दरजे छिपी हुई नहीं है जितना कि यह महान् तत्त्व। यदि कोई व्यक्ति हर प्रकार के बाहरी प्रभाव से अलग होकर .कुरान को पढ़े और उसके पृष्ठों में स्थान स्थान पर इस महान् तत्त्व के अकाट्य और स्पष्ट एलान देखे और फिर उस संसार की ओर दृष्टि डाले जिसने

यह समझ रखा है कि .कुरान भी अन्य धार्मिक सम्प्रदायों की तरह एक सम्प्रदायमात्र है तो अवश्य ही वह हैरान होकर पुकार उठेगा कि या तो मेरी निगाहें मुझे धोखा दे रही हैं और या संसार सदा विना आंखें खोले ही अपने फ़ैसले दे दिया करता है।

इस सच्चाई को स्पष्ट करने के लिए आवश्यक है कि एक बार विस्तार के साथ यह बात साफ़ कर दी जाय कि जहाँ तक 'वही' और 'नबुव्वत' यानी दीन (धर्म) का सम्बन्ध है .कुरान का आदेश क्या है और वह मनुष्य को किस मार्ग की ओर ले जाना चाहता है। सम्भव है यह विस्तार उस हद से बढ़ जावे जो हम 'तर्जुमा-नुल्क़ुरान' की व्याख्या के लिए नियत कर चुके हैं। किन्तु इस प्रश्न के असाधारण महत्व को देखते हुए हमें इस तरह की कड़ाई नहीं करनी चाहिए जिससे .कुरान के वास्तविक उद्देश्य की बुनियादी चीजें अस्पष्ट रह जायँ। इस बारे में .कुरान ने जो कुछ कहा है उसका सारांश इस प्रकार है—

.कुरान कहता है कि शुरू शुरू में मनुष्य स्वाभाविक जीवन व्यतीत करते थे, उनमें न कोई परस्पर मतभेद था और न कोई झगड़े। सबकी ज़िन्दगी एक ही तरह की थी और सब अपनी स्वाभाविक सादगी से सन्तुष्ट थे। फिर इनकी संख्या और आवश्यकताओं के बढ़ने पर इनमें तरह तरह के मतभेद पैदा हो गये। इन मतभेदों के कारण लोग एक दूसरे से बटकर टुकड़े टुकड़े हो गये और अन्याय तथा झगड़ों की उत्पत्ति हुई। हर दल दूसरे दल से घृणा करने लगा और बलवान दुर्बलों के अधिकार हड़पने लगे।

जब ऐसी अवस्था उत्पन्न हो गई तो यह आवश्यक हो गया कि मनुष्यजाति की हिदायत के लिए और न्याय तथा सत्य की स्थापना के लिए 'वही इलाही,' यानी ईश्वरीय ज्ञान, का प्रकाश प्रकट हो। इसीलिए यह प्रकाश प्रकट हुआ और ईश्वर की ओर से पैग़म्बरों को आने और उनके उपदेशों का सिलसिला क़ायम हो गया। .कुरान उन तमाम पथ-प्रदर्शकों को जिनके द्वारा इस हिदायत का सिलसिला क़ायम हुआ 'रसूल' के नाम से पुकारता है, क्योंकि वे ईश्वरीय सत्ता का सन्देश (पैग़ाम) पहुँचानेवाले थे, और रसूल का अर्थ पैग़ाम पहुँचानेवाला है।

وما كان الناس الا أمة واحدة فاختلفوا - ولوكان كلمة سبقت من ربک لقضي بينهم فيمافيه يختلفون

आरम्भ में मानवजाति का एक ही गिरोह था (लोग भिन्नभिन्न दलों के बंटे हुए नहीं थे), फिर वे एक दूसरे से अलग अलग हो गये। यदि तुम्हारे पालनकर्त्ता ने पहले से यह फ़ैसला न कर दिया होता (कि भविष्य में मानवसमाज में मतभेद होगा और लोग पृथक् पृथक् मार्ग ग्रहण करेंगे) तो जिन बातों में लोग मतभेद रखते हैं उनका निपटारा भी इसी दुनिया में कर

दिया गया होता। (सू० १०, आ० ३०)

كان الناس امة واحدة ـ
فبعث الله النبين مبشرين و
منذرين - و انزل معهم الكتاب
بالحق ليحكم بين الناس
فيما اختلفوا فيه

आरम्भ में सभी मनुष्य एक ही गिरोह थे (फिर उनमें मतभेद हुआ और वे एक दूसरे से पृथक हो गये), इसलिए परमात्मा ने (एक के बाद दूसरे) पैग़म्बरों को उत्पन्न किया, वे (सुकर्मों के परिणाम की) ख़ुश ख़बरी देते थे और (कुकर्मों के भयानक नतीजों से) लोगों को डराते थे। उनके साथ 'अल-किताब' (यानी ईश्वरीय आदेश से लिखी जाने वाली किताब) प्रकट हुई, ताकि जिन बातों में लोगों में मतभेद हो गया था उनमें वह किताब फ़ैसला कर दे। (सू० २, आ० २१३)

यह हिदायत किसी ख़ास देश, जाति, या काल के लिए ही नहीं बल्कि समस्त मानवसमाज के लिए थी। इसीलिए प्रत्येक युग और प्रत्येक देश में उसका एक सा अविर्भाव हुआ। क़ुरान कहता है कि दुनिया का ऐसा कोई कोना नहीं जहाँ मानवजाति बसी हो और जहाँ कोई न कोई पैग़म्बर ईश्वर की ओर से न हुआ हो।

وان من امة الا خلا فيها نذير

संसार की कोई क़ौम ऐसी नहीं है जिसमें (कुकर्मों के परिणाम से) डरानेवाला (ईश्वर का कोई पैग़म्बर) न पैदा हुआ हो। (सू० ३५, आ० २५)

انما انت منذر و لكل قوم هاد

(ऐ पैग़म्बर!) वास्तव में तुम इसके सिवा और कुछ नहीं—केवल (कुकर्मों के परिणामों से लोगों को) डरानेवाले (रसूल) हो। और दुनिया में हर क़ौम के लिए हिदायत करनेवाला हुआ है। (सू० १३, आ० ९)

و لكل امة رسول ۔ فاذا جاء رسولهم قضي بينهم بالقسط و هم لا يظلمون

हर कौम के लिए एक रसूल है। इसलिए जब रसूल (अपनी सत्य की शिक्षा के साथ) प्रकट होता है तो उस क़ौम के सारे लड़ाई झगड़ों, (अन्याय और उत्पातों) का इन्साफ़ के साथ फ़ैसला कर दिया जाता है। (सू० १०, आ० ४८)

क़ुरान कहता है कि मनुष्यजाति के प्रारम्भिक काल में एक के बाद दूसरे कितने ही पैग़म्बरों ने प्रकट होकर भिन्न भिन्न क़ौमों को सत्य का सन्देश सुनाया है।

و کم ارسلنا من نبی فی الاولین	और कितने ही नबी हैं जिन्हें हमने पहले के लोगों (यानी प्रारम्भिक काल की क़ौमों) में भेजा। (सू० ४३, आ० ५)

क़ुरान कहता है कि यह बात ईश्वरीय न्याय के विरुद्ध है कि जब तक किसी क़ौम की हिदायत के लिए उनमें कोई रसूल न भेजा गया हो तब तक वह क़ौम अपने कुकर्मों के लिए उत्तरदायी ठहराई जाय।

و ماکنا معذبین حتی نبعث رسولا	और (हमारा क़ानून यह है कि) जब तक हम एक पैग़म्बर भेजकर कर्तव्य का ज्ञान नहीं कराते तब तक कुकर्मों की सज़ा नहीं देते। (सू० १७, आ० १६)
و ماکان ربک مهلک القری حتی یبعث فی امها رسولا یتلوا علیهم آیاتنا - و ماکنا مهلکی القری الا و اهلها ظالمون	और (स्मरण रखो) तुम्हारे परमात्मा का नियम यह है कि वह कभी मनुष्यों की बस्तियों को (कुकर्मों के कारण) नष्ट नहीं करता जब तक कि उनमें एक

पैग़म्बर न भेज दे और वह पैग़म्बर ईश्वर का आदेश उन्हें पढ़कर न सुना दे। और हम कभी बस्तियों को नष्ट करनेवाले नहीं हैं, मगर सिर्फ़ उसी हालत में जब कि उनके रहनेवालों ने ज़ुल्म करना ही अपना पेशा बना लिया हो (यानी हमारे नियम के अनुसार सिर्फ़ वही आबादी नष्ट होती है जो अन्याय और झगड़ों में डूब जाती है और ईश्वर के आदेश की अवहेलना करती है) । (सू० २८, आ० ५९)

परमात्मा के इन रसूलों और ईश्वरीय धर्म के प्रचारकों में से कुछ का वर्णन क़ुरान में किया गया है और कुछ का नहीं।

و لقد ارسلنا رسلا من قبلک منهم من قصصنا علیک و منهم من لم نقصص علیک

और (ऐ पैग़म्बर !) हमने तुमसे पहले कितने ही पैग़म्बर भेजे। उनमें से कुछ ऐसे हैं जिनका वर्णन तुमसे किया है, और कुछ

ऐसे हैं जिनका वर्णन नहीं किया (यानी कुरान में उनका ज़िक्र नहीं किया गया है)।—सू० ४०, आ० ७८।

नूह, आद, और समूद क़ौमों के बाद कितनी ही क़ौमेंहो गई हैं और उनमें कितने ही रसूल भेजे जा चुके हैं जिनका ठीक ठीक हाल परमेश्वर को ही मालूम है।

الم ياتكم نبؤا الذين من قبلكم قبلكم قوم نوح و عاد و ثمود و الذين من بعدهم - لايعلمهم الا الله - جاءتهم رسلهم بالبينات فردوا ايديهم فى افواهم

तुमसे पहले जो क़ौमें संसार में हो चुकी हैं, क्या तुम तक उनकी ख़बर नहीं पहुँची? नूह, आद, समूद, और वे क़ौमें जो उनके बाद हुईं जिनकी ठीक ठीक संख्या परमेश्वर ही को मालूम है, उन सब क़ौमों में उनके लिए पैग़म्बर सत्य के प्रकाश के साथ भेजे गये। परन्तु उन क़ौमों ने मूर्खता और उद्दण्डता से उनके उपदेशों पर ध्यान नहीं दिया। (सू० १४, आ० ९)

संसार के हर कोने में प्रकृति के नियम ईश्वर की ओर से एक से ही हैं। वे न तो कई तरह के हो सकते हैं और न परस्पर

विरोधी हैं। इसलिए आवश्यक था कि यह हिदायत भी आरम्भ से एक सी होती और एक ही तरह पर सब मनुष्यों को मुख़ातिब करती। इसलिए .कुरान कहता है कि ईश्वर के जितने पैग़म्बर हुए हैं, चाहे वे किसी भी युग और देश में क्यों न हुए हों, सब का मार्ग एक ही था, और सबने मानवकल्याण के लिए ईश्वर के एक ही विश्वव्यापी नियम का उपदेश दिया। कल्याण का यह विश्वव्यापी नियम क्या है ? यह नियम ईमान (विश्वास) और सत्कर्मों का नियम है, यानी एक ईश्वर की उपासना और नेकी का जीवन व्यतीत करना। इसके अतिरिक्त और इसके प्रतिकूल जो बातें धर्म के नाम पर कही जाती हैं वह सच्चा धर्म नहीं है।

ولقد بعثنا فی کل امة رسولا
ان اعبدوا الله و اجتنبوا
الطاغوت

निस्सन्देह हमने दुनिया की हर .कौम में एक पैग़म्बर भेजा (जिसका उपदेश यह था) कि ईश्वर की उपासना करो और दुष्ट वासनाओं (यानी पाशविक वृत्तियों) के भुलावे में न आओ। (सू० १६, आ० ३८)

و ما ارسلنا من قبلک من
رسول الا نوحی الیه انه لا اله
الا انا فاعبدون

और (ऐ पैग़म्बर !) हमने तुमसे पहले कोई भी रसूल दुनिया में ऐसा नहीं भेजा जिसको

हमने यह आदेश (वही) न दिया हो कि "मैं ही एकमात्र उपास्य देव हूँ, इसलिए मेरी ही इबादत करो"। (सू० २१, आ० २४)

.कुरान कहता है कि दुनिया में कोई भी धर्मप्रवर्तक ऐसा नहीं हुआ जिसने इसी एक धर्म पर दृढ़ रहने और भेदभावों से बचने की शिक्षा न दी हो। सब की शिक्षा यही थी कि ईश्वर का धर्म बिछड़े हुए मनुष्यों को जमा कर देने के लिए है। उन्हें अलग अलग कर देने के लिए नहीं। इसलिए एक ही परमात्मा की उपासना में सब एकत्र हो जायँ और भेदभाव और झगड़े के स्थान पर पारस्परिक प्रेम और एकता का मार्ग ग्रहण करें।

و ان هذه امتكم امة واحدة
و انا ربكم فاتقون

और (देखो) यह तुम लोगों का सम्प्रदाय वास्तव में एक ही सम्प्रदाय है, और मैं तुम सब का परवरदिगार हूँ। इसलिए (मेरी उपासना और भक्ति की राह में तुम सब एक हो जाओ और) अवज्ञा से बचो। (सू० २३, आ० ५४)

.कुरान कहता है कि परमात्मा ने तुम सब को एक समान मनुष्य का चोला दिया था, परन्तु तुमने तरह तरह के वेष और

नाम ग्रहण कर लिये, जिससे मानवजाति की एकता का सूत्र टुकड़े टुकड़े हो गया। तुम्हारे वंश अनेक हैं इसलिए तुम वंश के नाम पर एक दूसरे से अलग हो गये। तुम्हारे अलग अलग बहुत से देश हो गये, इसलिए भिन्न भिन्न जन्मभूमियों के नाम पर तुम एक दूसरे से लड़ रहे हो। तुम्हारी जातियां अगणित हैं, इसलिए हर जाति दूसरी जाति से हाथापाई कर रही है। तुम्हारे रंग एक से नहीं हैं, यह भी पारस्परिक घृणा और द्वेष का एक बड़ा कारण बन गया है। तुम्हारी भाषाएं भिन्न भिन्न हैं, यह बात भी तुम्हें एक दूसरे से पृथक् करनेवाली है। इनके अलावा, अमीर ग़रीब, स्वामी सेवक, कुलीन अकुलीन, बलवान निर्बल, ऊंच नीच, इत्यादि, अगणित भेद उत्पन्न कर लिये गये हैं। इन सब का उद्देश्य यही है कि तुम एक दूसरे से पृथक् हो जाओ और एक दूसरे से घृणा करते रहो। ऐसी हालत में बतलाओ वह कौन सा सूत्र है जो इतने भेदों के होते हुए भी मनुष्य को एक दूसरे से जोड़ दे, और बिछुड़ा हुआ मानवपरिवार फिर नये सिरे से बस जाय? क़ुरान कहता है कि सिर्फ़ एक ही सूत्र बाक़ी रह गया है, और वह ईश्वरोपासना का पवित्र सूत्र है। तुम कितने ही अलग अलग क्यों न हो गये हो, परन्तु तुम्हारे लिए अलग अलग परमात्मा नहीं हो सकते। तुम सब एक ही परवरदिगार के बन्दे हो, और तुम सब की बन्दना और भक्ति के लिए एक ही उपास्य देव की चोखट है। तुम अगणित भेदभाव रख कर भी एक ही उपासना की डोरी में बंधे हुए हो। तुम्हारा कोई भी वंश क्यों न

हो, तुम्हारी कोई भी जाति क्यों न हो, तुम किसी भी दल अथवा श्रेणी के मनुष्य क्यों न हो, परन्तु जब तुम एक ही परमपिता की शरण में जाओगे तो यह ईश्वरीय सम्बन्ध तुम्हारे समस्त पार्थिव झगड़ों को मिटा देगा और तुम सब के बिछड़े हुए हृदय परस्पर मिल जायँगे। तब तुम अनुभव करोगे कि सारा संसार तुम्हारा देश है, सारा मानवसमाज तुम्हारा परिवार है और तुम सब एक ही परमपिता की सन्तान हो।

इसलिए क़ुरान का उपदेश है कि ईश्वर के जितने रसूल आये सबकी शिक्षा यही थी कि 'अल-दीन' (अद्दीन) पर, अर्थात् समस्त मानवजाति के एक विश्वव्यापी धर्म पर, तुम सब दृढ़ रहो और इस मार्ग में एक दूसरे से अलग न हो जाओ।

شرع لكم من الدين ما وصي
به نوحا والذي اوحينا اليك
و ما وصينا به ابراهيم و موسى
و عيسى ان اقيموا الدين
ولا تتفرقوا فيه

और (देखो) उसने तुम्हारे लिए धर्म का वही मार्ग स्थिर कर दिया है जिसकी हिदायत नूह को की गई थी और जिस पर चलने की आज्ञा इब्राहीम, मूसा, और ईसा को दी गई थी। (इन सब की परम्परागत शिक्षा यही थी कि) 'अद्दीन' यानी परमात्मा का धर्म क़ायम रखो

और इस राह में अलग अलग
न हो। (सू० ४२, आ० ११)

इसी आधार पर क़ुरान बतौर एक दलील के इस बात पर ज़ोर देता है कि यदि तुम्हें मेरी शिक्षा की सच्चाई से इनकार है तो तुम किसी भी धर्म के ईश्वरीय ग्रन्थ से सिद्ध कर दिखाओ कि सच्चे धर्म का मार्ग इसके सिवा कोई और भी हो सकता है। चाहे जिस धर्म की मूल शिक्षा को देखो, सब का मूलाधार तुम्हें यही मिलेगा।

قل هاتوا برهانكم - هذا ذكر
من معي و ذكر من قبلى - بل
اكثرهم لايعلمون الحق فهم
معرضون - و ما ارسلنا من
قبلك من رسول الا نوحي اليه
انه لا اله الا انا فاعبدون

(ऐ पैग़म्बर! इनसे) कह दो अगर तुम्हें मेरी शिक्षा से इनकार है तो तुम दलील पेश करो। यह ईश्वरीय वाणी मौजूद है, जिस पर मेरे साथियों को विश्वास है, और इसी तरह की अन्य ईश्वरीय वाणियां भी मौजूद हैं जो मुझसे पहले के पैग़म्बरों पर प्रकट हो चुकी हैं। (तुम सिद्ध कर दिखाओ किसी ने भी मेरी शिक्षा के विरुद्ध शिक्षा दी हो)। वास्तव में इन (सत्य से इनकार करनेवालों) में बहुधा ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें

सत्यका बिलकुल पता ही नहीं है, और इसलिए उस (सत्य) से मुंह मोड़े हुए हैं। (ऐ पैग़म्बर ! विश्वास करो) हमने तुमसे पहले कोई पैग़म्बर ऐसा नहीं भेजा है जिसे इस बात के सिवा कोई दूसरी बात बतलाई गई हो कि मेरे सिवा तुम्हारा कोई उपास्य नहीं, इसलिए मेरी ही उपासना करो। (सू० २१, आ० २४)

इतना ही नहीं, बल्कि क़ुरान कहता है किसी ईश्वरीय ग्रन्थ से, किसी धर्म की शिक्षा से, किसी भी ज्ञानी वा द्रष्टा की वाणी या परम्परागत आख्यायिका से तुम सिद्ध कर दिखाओ कि मेरी शिक्षा सत्य की शिक्षा नहीं है।

ائتونی بکتاب من قبل هذا او اثارة من علم ان کنتم صادقین

अगर तुम अपने इनकार में सच्चे हो तो सबूत में ऐसा कोई ग्रन्थ पेश करो जो अब से पहले प्रकट हुआ हो, या (कम से कम) ज्ञान या तत्वदर्शन का कोई ऐसा हवाला ही दो जो

परम्परा से तुम्हें प्राप्त हुआ हो।
(सू० ४६, आ० ३)

इसी आधार पर क़ुरान समस्त सांसारिक धर्मों के पारस्परिक समर्थन को भी बतौर एक दलील के पेश करता है, यानी वह कहता है कि इनमें से प्रत्येक शिक्षा दूसरी शिक्षा का समर्थन करती है, उसे झुठलाती नहीं। और जब हर शिक्षा दूसरी शिक्षा का समर्थन करती है तो इससे मालूम हुआ कि इन सारी शिक्षाओं की जड़ में कोई एक ही सनातन और नित्य सत्य अवश्य काम कर रहा है, क्योंकि यदि भिन्न देश, भिन्न काल, भिन्न जाति, भिन्न भाषा और भिन्न नाम रूप में कही हुई बातें, इतने भेदों के रहते हुए, तत्वरूप से सदा एक ही हों और एक ही लक्ष्य पर ज़ोर देती हों तो तुम्हें यह मान लेना पड़ेगा कि इन सब बातों की जड़ में कोई एक सनातन नित्य सत्य अवश्य है।

نزل علیک الکتاب بالحق مصدقا لما بین یدیہ و انزل التوریة و الانجیل من قبل ھدی للناس

(ऐ पैग़म्बर!) परमेश्वर ने यह ग्रन्थ (क़ुरान) जिसमें सच्चाई की शिक्षा है तुम पर प्रकट किया है। यह उन धर्म ग्रन्थों का समर्थन करता है जो इससे पहले प्रकट हो चुके हैं। इसी तरह लोगों के पथप्रदर्शन के लिए परमात्मा ने तौरात और

इञ्जील प्रकट की थीं। (सू० ३, आ० २)

हमने ईसा को इञ्जील प्रदान की, उसमें मनुष्य के लिए हिदायत और प्रकाश है, और उससे पहले जो तौरात प्रकट हो चुकी थी इञ्जील उसका समर्थन करती है, उसे झुठलाती नहीं। (सू० ५, आ० ४७)

و آتيناه الانجيل فيه هدى
و نور مصدقا لما بين يديه
من التورية

यही कारण है कि .कुरान के उपदेशों का एक बड़ा विषय .कुरान से पहले की हिदायतों और रसूलों का वर्णन है। .कुरान उनकी समानता, एकवाक्यता और शिक्षा की अभिन्नता से धार्मिक सच्चाई के समस्त उपदेशों को प्रमाणित करता है।

३ । धर्म और विधान ।

दीन और शरअ

अच्छा, यदि मनुष्य-मात्र के लिए एक ही धर्म है और सब धर्मप्रवर्तकों ने एक ही तत्त्व और एक ही क़ानून का उपदेश दिया है तो फिर धर्मों में इतनी भिन्नता कैसे हुई ? सब धर्मों में एक ही तरह की आज्ञाएँ, एक ही तरह के कर्म एक ही प्रकार के रीति रिवाज क्यों नहीं हुए ? किसी धर्म में उपासना की एक विधि अख़्तियार की गई है, किसी में दूसरी। किसी के माननेवाले एक ओर मुंह करके उपासना करते हैं तो किसी के दूसरी ओर। किसी के यहाँ व्यवस्था और नियम आदि एक तरह के हैं, किसी के यहां दूसरी तरह के।

.कुरान कहता है कि धर्मों की भिन्नता दो तरह की हैं। एक तो वह जिसे इन धर्मों के अनुयायियों ने धर्म की वास्तविक शिक्षा से हटकर पैदा कर लिया है। यह भिन्नता धर्मों की नहीं है बल्कि उन धर्मों के माननेवालों की गुमराही का नतीजा है। दूसरी भिन्नता वह है जो वास्तव में अलग अलग धर्मों की आज्ञाओं और उनकी क्रियाओं में पाई जाती है। जैसे, एक धर्म में उपासना की कोई ख़ास विधि स्वीकार की गई है, दूसरे में दूसरी विधि। यह भिन्नता मौलिक अथवा वास्तविक भिन्नता नहीं है, केवल ऊपरी

अर्थात् गौण भिन्नता है। और इस तरह की भिन्नता का होना अनिवार्य भी था।

क़ुरान कहता है कि सब धर्मों की शिक्षा में दो तरह की बातें होती हैं। एक तो वह जो धर्मों का तत्त्व और उनका सार है, दूसरी वह जिनसे उन धर्मों का बाहरी रूप सजाया गया है। पहली मुख्य और दूसरी गौण हैं। पहली को क़ुरान 'धर्मतत्त्व' (दीन) और दूसरी को विधि-विधान (शरअ और नुसुक) का नाम देता है। इस दूसरी चीज़ के लिए 'मिनहाज' का शब्द भी इस्तेमाल किया गया है। 'शरअ' और 'मिनहाज' का शब्दार्थ मार्ग है, और 'नुसुक' का अर्थ उपासना की विधि है। क़ुरान कहता है कि धर्मों में जो कुछ भी असली भिन्नता है वह धर्मतत्त्व की नहीं बल्कि नियमों और विधि-विधान की भिन्नता है, यानी, मूल की नहीं शाखाओं की है, असलीयत की नहीं बाहरी रूप रंग की है, आत्मा की नहीं शरीर की है। और इस भिन्नता का होना अनिवार्य था। धर्म का लक्ष्य मानवसमाज का कल्याण और उसका सुधार है, परन्तु प्रत्येक देश और प्रत्येक काल में मनुष्यसमाज की अवस्था और परिस्थिति न तो कभी एक सी हुई है और न हो सकती है। किसी ज़माने का रहन-सहन और उसकी मानसिक शक्तियां एक ख़ास ढङ्ग की थीं और किसी ज़माने की दूसरे ढङ्ग की। किसी देश की परिस्थिति के लिए एक ख़ास तरह का जीवन आवश्यक होता है और किसी देश के लिए दूसरी तरह का। इसलिए जिस धर्म का आविर्भाव जिस युग और जिस परिस्थिति में हुआ और जैसी

तबीयत के मनुष्यों में हुआ उसी तरह के नियम और विधि-विधान भी उस धर्म में अख़्तियार कर लिये गये। जिस काल और जिस देश में जो ढङ्ग नियत किया गया वही उस देश और काल के लिए उपयुक्त था। इसलिए हर सूरत अपनी जगह ठीक और सत्य है, और यह भेद उससे अधिक महत्त्व नहीं रखता जितना महत्त्व कि समस्त मानवजातियों के अलग अलग रहन-सहन और दूसरी स्वाभाविक विभिन्नताओं को दिया जा सकता है।

لكل امة جعلنا منسكا هم
ناسكوه فلا ينازعنك في الامر
و ادع الى ربك - انك لعلى
هدى مستقيم

(ऐ पैग़म्बर !) हमने हर गिरोह के लिए उपासना की एक ख़ास विधि नियत कर दी है जिस पर वह अमल करता है। इसलिए लोगों को चाहिए कि इस विषय में झगड़ा न करें। (ऐ पैग़म्बर !) तुम लोगों को अपने परमात्मा की ओर बुलाओ (कि असली चीज़ यही है)। वास्तव में तुम हिदायत के सीधे रास्ते पर चलते हो। (सू० २२, आ० ६६)

जब इस्लाम के पैग़म्बर ने यरूशलम (बैतुल-मुक़द्दस) के बदले काबे की तरफ़ मुंह करके नमाज़ पढ़नी शुरू की, तब यह

बात यहूदियों और ईसाइयों को अखरी, क्योंकि वे इन बाहरी और ऊपरी बातों पर ही धर्म का सारा दार-मदार रखते थे और इन्हीं को सत्य और असत्य की कसौटी समझते थे।

लेकिन क़ुरान ने इस मामले को बिलकुल दूसरी ही नज़र से देखा है। क़ुरान कहता है तुम इस तरह की बातों को इतना महत्त्व क्यों देते हो? यह न तो सत्य और असत्य की कसौटी ही है, और न इनका धर्म के वास्तविक अर्थात् मौलिक रूप से कोई सम्बन्ध ही है। प्रत्येक धर्म ने अपनी परिस्थिति और सुविधा के अनुसार उपासना की एक ख़ास विधि अख़्तियार कर ली और उसके अनुसार लोग बरतने लगे। परन्तु असली लक्ष्य सब का एक ही है और वह ईश्वरोपासना और सदाचरण है। इसलिए जो व्यक्ति सत्य का जिज्ञासु है उसे चाहिए कि वास्तविक लक्ष्य पर ध्यान रखे और इसी दृष्टि से सब बातों की परीक्षा करे, इन बाहरी बातों को सत्य और असत्य की कसौटी न समझ ले।

ولكل وجهة هو موليها
فاستبقوا الخيرات - آين
ما تكونوا يات بكم الله
جميعا - ان الله على كل شيء
قدير

और (देखो), हर गिरोह के लिए कोई न कोई दिशा है जिसकी ओर, उपासना करते समय, वह अपना मुंह कर लेता है (इसलिए इस मामले को इतना तूल न देकर) नेकी की राह में एक दूसरे से आगे बढ़

जाने का प्रयत्न करो (क्योंकि असली काम यही है)। चाहे तुम किसी जगह भी हो ईश्वर तुम्हें ढूंढ लेगा। अवश्य ही परमात्मा की शक्ति से कोई चीज़ बाहर नहीं है। (सू० २, आ० १४८)

फिर इसी सूरे में आगे चलकर क़ुरान ने साफ़ शब्दों में ख़ुलासा कर दिया कि असली धर्म क्या है, और किन बातों से मनुष्य धार्मिक कल्याण और समृद्धि प्राप्त कर सकता है? क़ुरान कहता है धर्म सिर्फ़ इस तरह की बातों में नहीं है कि उपासना करते समय किसी व्यक्ति ने मुंह पूरब की तरफ़ किया या पश्चिम की तरफ़। वास्तविक धर्म तो ईश्वर-भक्ति और सदाचरण है। फिर विस्तार के साथ बतलाया है कि ईश्वर-भक्ति और सदाचरण की असली बातें क्या क्या हैं।

ليس البر أن تولوا وجوهكم
قبل المشرق والمغرب ولكن
البر من آمن بالله واليوم
الآخر والملائكة والكتاب
والنبيين - و آتي المال على
حبه ذوي القربى و اليتامى

और (देखो) नेकी यह नहीं है कि तुमने (उपासना के समय) अपना मुंह पूर्व की ओर कर लिया या पश्चिम की ओर, (या इसी तरह की कोई दूसरी बात ज़ाहिरी रस्म व रिवाज की कर

والمساكين و ابن السبيل
والسائلين و فى الرقاب -
واقام الصلوة و آتى الزكوة -
والموفون بعهدهم اذا عاهدوا -
والصابرين فى البأساء والضراء
و حين البأس - اولئك
الذين صدقوا - و اولئك
هم المتقون

ली)। नेकी की राह तो उसकी राह है जो परमात्मा पर, आख़िरत (ईश्वर के सम्मुख उपस्थित होने) के दिन पर, फ़रिश्तों पर, समस्त ईश्वरीय-ग्रन्थों और सब पैग़म्बरों पर ईमान (विश्वास) लाता है, अपना प्यारा धन सम्बन्धियों, अनाथों, दरिद्रों, यात्रियों और मांगने वालों की राह में और गुलामों को आज़ाद कराने में ख़र्च करता है, नमाज़ पढ़ता है, ज़कात (अपनी कमाई में से धर्मार्थ) देता है, बात का पक्का है, भय और घबराहट तथा तंगी और मुसीबत के समय धीर और अविचलित रहता है। (स्मरण रखो) ऐसे ही लोग हैं जो (अपनी दीनदारी में) सच्चे हैं। और ये ही हैं जो बुराइयों से बचनेवाले इन्सान हैं। (सू० २, आ० १७२)

जिस ग्रन्थ में १३०० वर्ष से यह आयत मौजूद है, अगर संसार उसके उपदेश का वास्तविक लक्ष्य नहीं समझ सकता तो फिर कौन सी बात है जिसे संसार समझ सकता है ?

सूरा ५ में एक विशेष क्रम से क़ुरान से पहले के धर्मों के उत्थान का वर्णन किया गया है। यह वर्णन हज़रत मूसा और तौरात से आरम्भ होता है। फिर हज़रत मसीह के ज़हूर (आविर्भाव) का वर्णन किया जाता है।

انا انزلنا التورية فيه هدى
و نور ثم قفينا على آثارهم
بعيسى ابن مريم و انزلنا اليك
الكتاب بالحق مصدقا لما
بين يديه

मसीह के बाद इस्लाम के पैग़म्बर का आविर्भाव हुआ।

फिर इन भिन्न भिन्न उपदेशों के वर्णन के बाद क़ुरान लोगों को मुख़ातिब करते हुए कहता है—

हमने तुममें से हर एक के लिए (यानी प्रत्येक धर्म के अनुयायियों के लिए) एक ख़ास विधि-विधान नियत कर दिया है। अगर परमात्मा चाहता तो (विधियों

لكل جعلنا منكم شرعة
و منهاجا - ولو شاء الله لجعلكم
امة واحدة ولكن ليبلوكم
فى ما آتيكم فاستبقوا الخيرات

और विधानों में कोई अन्तर ही
न होता) तुम सब को एक ही
सम्प्रदाय बना देता। परन्तु यह
विभिन्नता इसलिए हुई कि (समय
और अवस्था के अनुसार) तुम्हें
जो आज्ञाएँ दी गई हैं उन्हीं में
तुम्हारी परीक्षा करे। इसलिए
इन विभिन्नताओं के पीछे न
पड़कर) नेकी की राहों में एक
दूसरे से आगे निकल जाने का
प्रयत्न करो (क्योंकि असली काम
यही है)। (सू० ५, आ० ४८)

इस आयत पर एक सरसरी नज़र डाल कर आगे न बढ़ जाओ, बल्कि इसके एक एक शब्द पर ग़ौर करो। जिस समय क़ुरान का आविर्भाव हुआ संसार का यह हाल था कि समस्त धर्मों के अनुयायी धर्म को सिर्फ़ उसकी बाहरी क्रियाओं और रस्मों में ही देखते थे और धार्मिक विश्वास का सारा जोश ख़रोश इसी तरह की बातों तक सीमित रह गया था। प्रत्येक धर्म के अनुयायी यही विश्वास करते थे कि दूसरे धर्मवालों को कभी मुक्ति नहीं मिल सकती, क्योंकि वे देखते थे कि दूसरे धर्मवालों की क्रियाएं और रस्में वैसी नहीं हैं जैसी कि उन्होंने स्वयं अख़्तियार कर रखी हैं।

परन्तु क़ुरान कहता है कि नहीं, यह क्रियाएँ और रस्में न तो धर्म की असल और हक़ीक़त हैं और न उनका भेद सत्य और असत्य का भेद है। यह सब धर्म के केवल व्यावहारिक जीवन का ऊपरी ढाँचा है, तत्त्व और सार इससे उच्चतर है, और वही वास्तविक धर्म है। यह वास्तविक धर्म क्या है?—एक परमात्मा की उपासना और सदाचरण का जीवन। यह किसी एक गिरोह की पैतृक सम्पत्ति नहीं है जो उसके सिवा किसी और को न मिली हो। यह सब धर्मों में समान रूप से मौजूद है, क्योंकि यही धर्म की असल यानी जड़ है। इसलिए न तो इसमें परिवर्तन हुआ और न किसी तरह का अन्तर ही। क्रियाएं और रस्में गौण हैं, देश और काल के अनुसार ये सदा बदलती रही हैं और जो कुछ भी अन्तर हुआ है इन्हीं में हुआ है।

फिर क़ुरान पूछता है कि क्रियाओं और रस्मोंकी इस भिन्नता को तुम इतना महत्त्व क्यों दे रहे हो? परमात्मा ने प्रत्येक देश और प्रत्येक युग के लिए एक विशेष प्रकार की रीति नीति स्थिर कर दी, जो उसकी आवश्यकता और अवस्था के उपयुक्त थी और लोग उसी पर कारबन्द हैं। यदि परमात्मा चाहता तो समस्त मानवजाति को एक ही क़ौम बना देता और विचारों और क्रियाओं की कोई भिन्नता उत्पन्न ही न होने देता। किन्तु ईश्वर ने ऐसा नहीं चाहा। उसकी सर्वज्ञता ने यही उचित समझा कि विचारों और क्रियाओं की भिन्न भिन्न अवस्थाएँ उत्पन्न हों। इसलिए इस भिन्नता को सत्य और असत्य की भिन्नता क्यों मान ली जाय? क्यों इस

भिन्नता के कारण एक गिरोह दूसरे गिरोह से लड़ने के लिए तैयार रहे ? असल चीज़ जिस पर सारा ध्यान देना चाहिए नेकी के काम हैं, और समस्त ऊपरी क्रियाएँ और रस्में इसीलिए हैं कि उनके द्वारा हम नेकी की राह पर .कायम रह सकें।

ग़ौर करो इस आयत में कहा गया है कि हमने तुममें से प्रत्येक धर्म के अनुयायी के लिए एक बिधि-विधान (शरअ और मिनहाज) ठहरा दिया है, इसमें यह नहीं कहा गया कि एक धर्म (दीन) ठहरा दिया है। क्योंकि धर्म तो सब के लिए एक ही है, धर्म एक से अधिक या कई तरह का नहीं हो सकता। हाँ, विधि-विधान सब के लिए एक तरह का नहीं हो सकता। हर समय और हर देश की स्थिति और योग्यता के अनुसार विधि-विधान का भिन्न भिन्न होना ज़रूरी था, अर्थात् विविध धर्मों की भिन्नता तात्त्विक अथवा मौलिक भिन्नता नहीं है वरन् केवल बाह्य अथवा गौण चीज़ों की भिन्नता है।

यहाँ यह बात याद रखनी चाहिए कि जहाँ भी .कुरान ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि अगर परमात्मा चाहता तो सारे मनुष्य एक ही मार्ग पर एकत्र हो जाते या एक ही जाति बन जाते, जैसा कि ऊपर की आयत में बयान किया गया है, वहाँ उन सब आयतों का मतलब इसी सत्य को स्पष्ट करना है। .कुरान चाहता है यह बात लोगों के दिल में बैठा दी जाय कि विचारों और क्रिया की भिन्नता मनुष्यस्वभाव की एक विशेषता है, और जिस तरह यह भिन्नता और सब बातों में पाई जाती है उसी तरह

धार्मिक बातों में भी मौजूद है। इसलिए इस भिन्नता को सत्य और असत्य की कसौटी नहीं समझना चाहिए। क़ुरान कहता है कि जब परमात्मा ने मनुष्य का स्वभाव ही ऐसा बनाया है कि प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक जाति, प्रत्येक ज़माना, अपनी अपनी समझ, अपनी अपनी पसन्द और अपना अपना तौर तरीक़ा रखता है, और यह सम्भव नहीं कि किसी एक छोटी से छोटी बात में भी सब मनुष्यों का स्वभाव एक तरह का हो जाय, तो फिर यह कब सम्भव था कि धार्मिक क्रियाएँ और रस्में भिन्न भिन्न न होतीं, और सब एक ही ढंग अख़्तियार कर लेते? यहां भी भेद होना था और हुआ। किसी ने एक साधन से और किसी ने दूसरे साधन से असली लक्ष्य तक पहुँचना चाहा। परन्तु असली लक्ष्य में, यानी ईश्वरोपासना और सदाचरण की शिक्षा में, सभी एक मत रहे। किसी भी धर्म ने यह शिक्षा नहीं दी कि ईश्वर की उपासना नहीं करनी चाहिए। किसी ने भी यह नहीं सिखलाया कि झूठ बोलना सच बोलने से बेहतर है। इसलिए जब सब का मूल लक्ष्य एक ही है तो केवल बाहरी चीज़ों और क्रियाओं की विभिन्नता से क्यों कोई किसी का विरोधी और दुश्मन बन जाय? क्यों हर गिरोह दूसरे गिरोह को झुठलावे? क्यों धार्मिक सच्चाई किसी एक ही जाति या सम्प्रदाय की बपौती समझ ली जाय?

एक स्थल पर ख़ुद पैग़म्बर मुहम्मद को मुख़ातिब करते हुए, क़ुरान कहता है कि तुम जोश में आकर चाहते हो कि सब लोगों को अपने ही मार्ग पर ले आओ, परन्तु तुम्हें यह बात नहीं भूलनी

चाहिए कि विचारों और क्रियाओं की विभिन्नता मनुष्यस्वभाव की नैसर्गिक विशेषता है। तुम ज़बरदस्ती कोई बात किसी के गले नहीं उतार सकते।

ولو شاء ربک لامن من فی الارض کلهم جمیعا - آانت تکره الناس حتی یکونوا مؤمنین

और अगर तुम्हारा पालनकर्त्ता चाहता तो इस पृथ्वी पर जितने भी मनुष्य हैं सब के सब तुम्हारी बात मान लेते, (लेकिन तुम देख रहे हो कि उसके कौशल का यही निश्चय है कि प्रत्येक मनुष्य अपनी अपनी समझ और अपनी अपनी राह रखे)। फिर क्या तुम चाहते हो कि लोगों को मजबूर कर दो कि सब तुम्हारी ही बात मानें। (सू० १०, आ० ९९)

.कुरान कहता है कि मनुष्य का स्वभाव ही ऐसा बना है कि हर गिरोह को अपना ही तौर तरीक़ा अच्छा दिखाई देता है, वह अपनी बातों को अपने विरोधियों की दृष्टि से नहीं देख सकता। जिस तरह तुम्हारी दृष्टि में तुम्हारा ही मार्ग सर्वश्रेष्ठ है, ठीक उसी तरह दूसरों की दृष्टि में उनका अपना मार्ग सर्वश्रेष्ठ है। इसलिए

इस बारे में अपने अन्दर सहिष्णुता और उदार दृष्टि पैदा करो; इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं।

और (देखो), जो लोग परमात्मा को छोड़ कर दूसरों की उपासना करते हैं, तुम उन्हें बुरा मत कहो क्योंकि (नतीजा यह होगा कि) वे लोग भी द्वेष और नादानी से परमात्मा को भला बुरा कहने लगेंगे। (स्मरण रखो) हमने मनुष्य का स्वभाव ही ऐसा बनाया है कि प्रत्येक गिरोह को अपने ही काम अच्छे दिखलाई पड़ते हैं। फिर अन्त में सब को अपने परवरदिगार की ओर लौटना है, और वही हर गिरोह को उसके कर्मों की असलीयत बतलायेगा (सू० ६, आ० १०८)

ولا تسبوا الذين يدعون من دون الله فيسبوا الله عدوا بغير علم - كذلك زينا لكل امة عملهم - ثم الى ربهم مرجعهم فينبئهم بما كانوا يعملون

४ । साम्प्रदायिकता ।

गिरोह-परस्ती

अच्छा, ज़ब सारे धर्मों का मुख्य लक्ष्य एक ही है और सब की बुनियाद सत्य पर है तो फिर .कुरान की क्यों आवश्यकता हुई ? .कुरान का उत्तर है कि यद्यपि सब धर्म सच्चे हैं लेकिन उन सब के अनुयायी सत्य से हट गये हैं। इसलिए यह आवश्यक हुआ कि सब को उनकी खोई हुई सच्चाई पर नये सिरे से क़ायम कर दिया जाय।

इस सम्बन्ध में .कुरान ने विविध धर्मों के अनुयायियों की सारी गुमराहियाँ एक एक करके गिनाई हैं। यह गुमराहियाँ विश्वाससम्बन्धी और व्यवहारसम्बन्धी दोनों तरह की हैं। इनमें एक सबसे बड़ी गुमराही जिस पर जगह जगह ज़ोर दिया गया है वह है जिसे .कुरान साम्प्रदायिकता (तशय्यु) और दलबन्दी (तहज़्ज़ुब) का नाम देता है, यानी अलग अलग जत्थे और दल बना कर उनमें ऐसे भावों का पैदा कर देना जिससे लोग असली दीन यानी ईश्वरोपासना और सदाचरण को छोड़कर अपने दल-विशेष की पूजा और उसी के विधि-विधान को अपना ध्येय मान बैठें। इसी को .कुरान साम्प्रदायिकता यानी गिरोह-परस्ती का नाम देता है।

ان الذين فرقوا دينهم و كانوا شيعا لست منهم في شيء - انما امرهم الي الله ثم ينبئهم بما كانوا يفعلون

जो लोग अपने धर्म के टुकड़े टुकड़े कर अलग अलग गिरोहों में बंट गये, उनसे तुम्हें कोई वास्ता नहीं। उनका मामला .खुदा के हवाले है। जैसे कुछ उनके कर्म रहे हैं उसका नतीजा .खुदा उन्हें बतला देगा। (सू० ६, आ० १६०)

فتقطعوا امرهم بينهم زبرا - كل حزب بما لديهم فرحون -

फिर लोगों ने एक दूसरे से पृथक् होकर अलग अलग धर्म बना लिये; हर टोली के पल्ले जो कुछ पड़ गया वह उसी में मग्न है। (सू० २३, आ० ५४)

साम्प्रदायिकता और दलबन्दी की गुमराही से क्या मतलब है, इसे विस्तारपूर्वक समझ लेना चाहिए। .कुरान कहता है, ईश्वर के बताये हुए धर्म का तत्त्व तो यह है कि वह मानवजाति पर ईश्वरोपासना और सदाचरण के मार्ग खोल दे, यानी ईश्वर के इस नियम को घोषित कर दे कि संसार की अन्य वस्तुओं की तरह मनुष्य के कर्मों के भी अलग अलग गुण और अलग अलग फल होते हैं, अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का बुरा होता है। परन्तु लोग इस सचाई को तो भूल गये और धर्म की असलीयत केवल वंशों, जातियों, देशों और तरह तरह के रीति-रिवाजों को ही समझ

बैठे। नतीजा यह हुआ कि अब मनुष्य की मुक्ति और उसके कल्याण का मार्ग यह नहीं समझा जाता कि उसका विश्वास या उसके कर्म कैसे हैं, बल्कि सारा दार-मदार इस पर आ गया कि कौन किस विशेष जत्थे या समुदाय में शामिल है और कौन नहीं है। अगर एक आदमी किसी ख़ास मज़हबी गिरोह में शामिल है तो यह विश्वास किया जाता है कि उसे मुक्ति मिल गई और उसने धार्मिक सत्य प्राप्त कर लिया। अगर वह शामिल नहीं है तो विश्वास किया जाता है कि मुक्ति का द्वार उसके लिए बन्द है और धार्मिक सचाई में उसका कोई हिस्सा नहीं। मानो साम्प्रदायिकता और दलबन्दी ही धर्म की सचाई, अन्त समय की मुक्ति और सत्य तथा असत्य की कसौटी है। विश्वास और कर्म कोई चीज़ ही नहीं रहे। यद्यपि समस्त धर्मों का लक्ष्य एक ही है, और सब एक ही विश्वम्भर प्रभु के उपासक हैं तथापि प्रत्येक सम्प्रदाय का यही विश्वास है कि धर्म की सत्यता केवल उसी के पल्ले पड़ी है और बाक़ी सारे मनुष्य उससे वञ्चित हैं। इसलिए प्रत्येक धर्म का अनुयायी दूसरे धर्मों के विरुद्ध घृणा और पक्षपात की शिक्षा देता है और संसार में ईश्वरोपासना और धर्म का मार्ग सर से पैर तक ईर्षा और द्वेष, घृणा और बर्बरता, हत्या और रक्तपात का मार्ग हो गया है। इस सम्बन्ध में क़ुरान ने जिन महान् बातों पर ज़ोर दिया है उनमें तीन सब से स्पष्ट हैं।

(१) मनुष्य का कल्याण और उसकी मुक्ति उसके विश्वास और उसके कर्मों पर निर्भर है, न कि सम्प्रदायविशेष पर।

(२) मनुष्यमात्र के लिए ईश्वरीय धर्म एक ही है और एक समान सब को उसकी शिक्षा दी गई है। इसलिए धर्मों के अनुयायियों ने धर्म की एकता और उसके विश्वव्यापी तत्त्व को नष्ट कर जो बहुत से विरोधी और परस्पर लड़नेवाले जत्थे बना लिए हैं, यह साफ़ उनकी गुमराही है।

(३) धर्म की जड़ एकेश्वरवाद है, यानी एक विश्वम्भर प्रभु की सीधी उपासना।

और सब धर्मप्रवर्तकों ने इसी की शिक्षा दी है। इसके ख़िलाफ़ जितने विश्वास और कर्म स्वीकार कर लिये गये हैं, वे सब असलीयत से हट जाने के नतीजे हैं।

ऊपर की आयतों के अतिरिक्त निम्नलिखित आयतों में भी इसी तत्त्व पर ज़ोर दिया गया है।

و قالوا لن يدخل الجنة
الا من كان هودا او نصارى -
تلك امانيهم - قل هاتوا
برهانكم ان كنتم صادقين -
بلى من اسلم وجهه لله وهو
محسن فله اجره عند ربه
ولا خوف عليهم ولا هم يحزنون

और यहूदियों और ईसाइयों ने कहा कि स्वर्ग में ऐसे किसी मनुष्य का प्रवेश नहीं हो सकता जो यहूदी या ईसाई न हो। यह उन लोगों का केवल वहम है, (वास्तविकता यह नहीं है। ऐ पैग़म्बर!) इनसे कह दो कि अगर तुम सच्चे हो तो बतलाओ तुम्हारी दलील क्या है ? हाँ,

(निस्सन्देह मुक्ति का मार्ग खुला हुआ है, वह मार्ग किसी सम्प्रदाय-विशेष के लिए नहीं है। वह मार्ग तो आस्तिकता और नेक कामों का मार्ग है) । जिस किसी ने परमात्मा के आगे सर झुकाया और सदाचारी हुआ, (वह चाहे यहूदी हो या ईसाई या कोई और) वह अपने पालनहार से अपना फल पायेगा, और उसके लिए न तो किसी तरह का भय है और न कोई शोक। (सू० २, आ० १०६)

सूरा २ में यही हक़ीक़त और भी साफ़ शब्दों में कही गई है।

ان الذين آمنوا والذين هادوا
والنصارى والصابئين من آمن
بالله و اليوم الآخر و عمل
صالحا فلهم اجرهم عند ربهم -
ولا خوف عليهم ولا هم
يحزنون -

जो लोग (पैग़म्बर पर) ईमान लाये हैं चाहे वे हों, या वे लोग हों जो यहूदी या ईसाई या साबी हैं, कोई भी क्यों न हो, (और किसी भी सम्प्रदाय से क्यों न हो, परमात्मा का क़ानून मुक्ति

के लिए यह है कि) जो भी परमात्मा पर और ईश्वरीय न्याय (यानी क़ियामत) पर ईमान लाया, और जिसके कर्म अच्छे हुए, वह अपने विश्वास और कर्मों का फल अपने पालनहार प्रभु से अवश्य पायेगा। उसके लिए न तो किसी तरह का खटका है, न किसी तरह का शोक। (सू० २, आ० ५९)

यानी धर्म का लक्ष्य तो ईश्वरोपासना और नेक काम थे, धर्म किसी सम्प्रदायविशेष का नाम नहीं था। कोई भी मनुष्य, चाहे वह किसी वंश या जाति का क्यों न हो, और किसी भी नाम से पुकारा जाता हो, अगर वह ईश्वरनिष्ठ और सदाचारी है तो वह ईश्वरीय पथ का पथिक है और उसे मुक्ति प्राप्त होगी। लेकिन यहूदियों और ईसाइयों ने इसके विरुद्ध अपनी अपनी पैतृक और साम्प्रदायिक गिरोहबन्दियों के क़ानून बना लिये। यहूदियों ने साम्प्रदायिकता का एक दायरा बनाया और उसका नाम यहूदी-मत रखा। जो इस दायरे के अन्दर है वह सत्य पर है और उसके लिए मुक्ति भी है। जो इसके बाहर है वह असत्य पर है और उसे कभी मुक्ति नहीं मिल सकती। इसी तरह ईसाइयों ने भी अपना एक

दायरा बना कर उसका नाम ईसाई-मत रख लिया। जो इसमें दाख़िल है केवल वही सच्चाई पर है और केवल उसी के लिए मुक्ति है, और जो उसके बाहर है न उसका सत्य में कोई हिस्सा है, और न वह मुक्ति प्राप्त कर सकता है। अब रहे मनुष्य के कर्म सो उनका नितान्त कोई मूल्य ही नहीं रहा। चाहे कोई व्यक्ति कितना ही ईश्वरनिष्ठ और सदाचारी क्यों न हो, पर यदि वह यहूदियों की पैतृक गिरोहबन्दी या ईसाइयों की साम्प्रदायिक गिरोहबन्दी में दाख़िल नहीं है तो कोई भी यहूदी अथवा ईसाई उसे सत्पथ का अनुगामी नहीं मान सकता। इसके विपरीत यदि बुरे से बुरे कर्मों का करनेवाला भी इनमें से किसी सम्प्रदाय में शामिल है तो उसके सम्प्रदायवाले उसे मुक्ति का अधिकारी समझते हैं। यहूदियों और ईसाइयों के इसी विश्वास को .कुरान इन शब्दों में प्रकट करता है—"कूनू हूदन औ नसारा तहतदू," यानी इन लोगों के अनुसार ईश्वरनिष्ठा और अच्छे कर्मों की राह ईश्वरप्रदर्शित राह नहीं है, बल्कि यहूदी और ईसाई सम्प्रदाएं ही ईश्वरप्रदर्शित राहें हैं। जब तक कोई व्यक्ति यहूदी अथवा ईसाई न हो जाए तब तक वह सत्पथ का गामी नहीं हो सकता। फिर .कुरान इस विचार का खण्डन करते हुए कहता है—परमात्मा की हिदायत जो संसार का एक सर्वव्यापी नियम है, भला इन लोगों की अपनी गढ़ी हुई गिरोहबन्दियों में क्योंकर परिमित हो सकती है? "बला, मन अस्लम वजहहू लिल्लाहे व होव मुहसिन।" इस वाक्य के ज़ोर और उसकी व्यापकता पर ध्यान दो। कोई भी व्यक्ति, किसी भी वंश, जाति या सम्प्रदाय

का क्यों न हो यदि उसने परमात्मा के सम्मुख भक्तिभाव से सर झुकाया और सदाचार का जीवन व्यतीत करना अंगीकार कर लिया, तो उसने मुक्ति और कल्याण प्राप्त कर लिया, उसके लिए कोई खटका अथवा ग़म नहीं है।

धार्मिक सच्चाई की व्यापकता का इससे ज़्यादा साफ़ और सार्व-भौमिक एलान और क्या हो सकता है ?

وقالت اليهود ليست النصارى على شیء و قالت النصارى ليست اليهود على شي ء و هم يتلون الكتاب ـ كذلك قال الذين لا يعلمون مثل قولهم - فالله يحكم بينهم يوم القيامة فيما كانوا فيه يختلفون

और यहूदियों ने कहा कि ईसाइयों का धर्म कुछ नहीं है। इसी तरह ईसाइयों ने कहा कि यहूदियों के पास क्या धरा है ? हालाँकि दोनों ईश्वरीय ग्रन्थ पढ़ते हैं। और दोनों के धर्म का उद्गमस्थान एक ही है। ठीक ऐसी ही बातें वे लोग करते हैं जो धर्मग्रन्थों का ज्ञान नहीं रखते (यानी अरब के प्राचीन धर्मावलम्बी जो यहूदियों और ईसाइयों की तरह केवल अपने ही को मुक्ति का पैतृक अधिकारी समझते थे)। अच्छा, जिस बात को लेकर यह परस्पर झगड़ रहे

हैं अन्तिम न्याय के दिन परमेश्वर उसका फ़ैसला कर देगा (और उसी समय हक़ीकत सब पर प्रकट हो जायगी)।—सू० २, आ० ११३।

अर्थात् यद्यपि परमात्मा का बताया हुआ धर्म एक ही है और एक ही ईश्वरीय ग्रन्थ यानी तौरात दोनों के सामने मौजूद है, फिर भी इस धार्मिक गिरोहबन्दी का परिणाम यह हुआ कि दो परस्पर विरोधी और एक दूसरे को झूठा कहनेवाले जत्थे क़ायम हो गये। प्रत्येक जत्था दूसरे जत्थे को झुठला रहा है और हर जत्था सिर्फ़ अपने को ही मुक्ति और कल्याण का ठेकेदार समझता है।

प्रश्न यह है कि जब धर्म एक होने के स्थान पर अगणित जत्थों और सम्प्रदायों में बंट गया और हर जत्था केवल अपने ही को सच्चा और बाक़ी सब को झूठा बतलाने लगा तो अब इस बात का फ़ैसला कैसे हो कि वास्तव में सत्य कहाँ है? क़ुरान कहता है कि वास्तविक सत्य तो सब के पास है किन्तु व्यवहार में सब ने उसे खो रखा है। सब को एक ही धर्म की शिक्षा दी गई थी और सब के लिए एक ही विश्वव्यापी हिदायत थी, लेकिन सब ने वास्तविक तत्त्व को नष्ट कर दिया और ईश्वरीय पथ पर मिल जुल कर रहने के स्थान पर अलग अलग गिरोहबन्दियां कर लीं। अब

प्रत्येक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय से लड़ रहा है और समझता है कि मुक्ति और कल्याण मेरी ही पैतृक सम्पत्ति है, दूसरों का इसमें कोई हिस्सा नहीं।

सूरा २ में ऊपर की आयत के बाद ही निम्नलिखित बयान आता है—

و من اظلم ممن منع مساجد الله ان يذكر فيها اسمه و سعى فى خرابها - اولئك ما كان لهم يدخلوها الا خائفين - لهم فى الدنيا خزي و لهم فى الاخرة عذاب عظيم

और (ग़ौर करो), उससे बढ़ कर अन्यायी और कौन हो सकता है जो परमात्मा के उपासना-मन्दिरों में किसी को परमात्मा के स्मरण और कीर्त्तन करने से रोके अथवा उन मन्दिरों के नष्ट करने का प्रयत्न करे? जो लोग ऐसे ज़ुल्म और उपद्रव करते हैं, वे वास्तव में इस योग्य नहीं हैं कि परमात्मा के मन्दिरों में पैर भी रखें (वे तभी उन मन्दिरों में प्रवेश कर सकते हैं जब दूसरों को डराने के स्थान पर वे स्वयं दूसरों से डरें और अन्याय तथा उपद्रव करने का साहस उनमें न रहे)। स्मरण

रखो, ऐसे आदमियों को इस
लोक में अपकीर्ति और परलोक
में महान् यंत्रणा भोगनी होगी।
(सू० २, आ० ११४)

यानी, विविध धर्मों की इस गिरोहबन्दी का परिणाम यह हुआ कि परमात्मा के उपासना-मन्दिर तक अलग अलग हो गये। यद्यपि सब धर्मों के अनुयायी एक ही परमात्मा के माननेवाले हैं, तथापि यह सम्भव नहीं कि एक धर्म का अनुयायी दूसरे धर्मवालों के बनाये हुए उपासना-मन्दिर में जाकर परमात्मा का नाम ले सके। इतना ही नहीं, बल्कि प्रत्येक सम्प्रदाय के लोग केवल अपने ही उपासना-मन्दिर को ईश्वर की उपासना का स्थान समझते हैं और दूसरे सम्प्रदायों के उपासना-गृहों का उनकी नज़रों में कोई आदर ही नहीं। यहां तक कि लोग कभी कभी धर्म के नाम पर उठकर दूसरों के उपासना-गृहों को नष्ट भ्रष्ट तक कर डालते हैं। क़ुरान कहता है इससे बढ़ कर अन्याय मनुष्य और क्या कर सकता है कि ख़ुदा के बन्दों को उसकी पूजा करने से रोके। और केवल इसलिए रोके कि वे किसी दूसरे सम्प्रदाय में शामिल हैं, या किसी उपासना-गृह को केवल इसलिए गिरा दे कि वह हमारा नहीं बल्कि दूसरे सम्प्रदायवालों का बनवाया हुआ है। क्या तुम्हारे गढ़े हुए सम्प्रदायों की भिन्नता से परमात्मा भी भिन्न भिन्न हो गया? क्या एक सम्प्रदाय-का बनवाया हुआ उपासना-गृह परमात्मा का उपासना-मन्दिर है,

और दूसरों का बनवाया हुआ उपासना-गृह परमात्मा का उपासना मन्दिर नहीं है ?

و لا تؤمنوا الا لمن تبع دينكم-
قل ان الهدى هدي الله ان
يؤتى احد مثل ما اوتيتم
او يحاجوكم عند ربكم -
قل ان الفضل بيد الله -
يؤتيه من يشاء - والله
واسع عليم

और (यहूदी लोग आपस में एक दूसरे से कहते हैं कि) सिवा उनके जो तुम्हारे दीन की पैरवी करते हैं और किसी की बात न मानो। (ऐ पैग़म्बर !) उनसे कह दो कि परमात्मा की हिदायत ही असली हिदायत है (और वह सब के लिए एक समान खुली है, किसी सम्प्रदाय-विशेष के लिए ही नहीं), और वह (यहूदी लोग) एक दूसरे से कहते हैं कि यह बात कभी न मानो कि जो धार्मिक सत्य तुम्हें दिया जा चुका है वह अब किसी दूसरे को भी मिल सकता है, या परमात्मा के सामने यहूदियों के विरुद्ध किसी दूसरे की कोई बात चल सकेगी। (ऐ पैग़म्बर !) तुम इनसे कह दो कि परमात्मा

की देन और उसके प्रसाद का भण्डार तुम्हारे हाथों में नहीं है, वह उसी के हाथों में है। वह चाहे जिसे दे। वह सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है। (सू० ३, आ० ७४)

यानी, यहूदियों का विश्वास यह है कि धर्म की जो हिदायत ईश्वर ने उन्हें दी है वह केवल उन्हीं को दी है; सम्भव नहीं कि वह हिदायत किसी दूसरे व्यक्ति या जाति को प्राप्त हो सके। इस लिए वे कहते हैं कि अपनी सम्प्रदाय के लोगों के सिवा और किसी की भी सच्चाई या श्रेष्ठता को स्वीकार न करो, और न यह मानो कि परमात्मा के सामने तुम्हारे (यहूदियों के) विरुद्ध किसी भी आदमी की दलील चल सकती है। क़ुरान इस झूठे गुमान का खण्डन करता है और कहता है "इन्नल हुदा हुदल्लाह," यानी परमात्मा की हिदायत ही असली हिदायत है। उस प्रभु की कृपा किसी एक व्यक्ति या समुदाय के लिए ही नहीं बल्कि सब के लिए है। इसलिए जो भी व्यक्ति ईश्वर की हिदायत की हुई राह पर चलेगा वह सत्य का अनुयायी समझा जायगा, चाहे वह यहूदी हो चाहे कोई और।

यहूदियों में साम्प्रदायिक गर्व इतना बढ़ गया था कि वे कहते थे कि परमात्मा ने दोज़ख़ की आग हम पर हराम कर दी है, और अगर हममें से कोई नरक में डाला भी जायगा तो इसलिए नहीं

कि उसपर ईश्वर का कोप है, बल्कि इसलिए कि अपने गुनाहों के दाग़ धब्बों से पाक साफ़ होकर वह फिर जन्नत में दाखिल हो।

क़ुरान इनके इस झूठे गुमान को जगह जगह बयान करता है और उसका खण्डन करते हुए पूछता है कि यह बात तुम्हें कहाँ से मालूम हुई कि यहूदी-सम्प्रदाय का प्रत्येक व्यक्ति मुक्तिप्राप्त है और उसे परलोक की यंत्रणा से छुटकारा मिल चुका है? क्या तुम्हें परमात्मा ने बिना शर्त के मुक्ति का पट्टा लिख कर दे दिया है, कि जहां कोई व्यक्ति यहूदी हुआ दोज़ख़ की आग उस पर हराम हो गई? अगर नहीं दिया तो फिर बतलाओ ऐसा विश्वास करना परमात्मा के नाम पर झूठ गढ़ना नहीं तो और क्या है? इसके बाद क़ुरान परमात्मा के बनाये हुए इस नियम का एलान करता है कि "जिस किसी ने भी अपने कर्मों से बुराई कमाई उसका फल बुरा है, और जिस किसी ने भी भलाई कमाई उसका फल अच्छा है।" जिस तरह संखिया खाने से खानेवाला मर जाता है, चाहे यहूदी हो या ग़ैर यहूदी, और दूध पीने से स्वस्थ और पुष्ट होता है चाहे पीनेवाला किसी भी वंश, जाति या सम्प्रदाय का क्यों न हो, इसी तरह अन्तर्जगत में भी प्रत्येक कर्म का एक गुण विशेष है जो कर्म करनेवाले के जन्म, जाति या सम्प्रदायविशेष के कारण बदल नहीं सकता। सू० २ में लिखा है—

وقالوا لن تمسنا النار الا ايامًا معدودة - قل اتخذتم

और ये लोग (यहूदी) कहते हैं कि नरक की आग हमें कभी

عند الله عهدا فلن يخلف
الله عهده ام تقولون علي الله
ما لا تعلمون - بلى من كسب
سيئة و احاطت به خطيئته -
فاولئك اصحاب النار هم
فيها خالدون - والذين
آمنوا و عملوا الصالحات
اولئك اصحاب الجنة هم
فيها خالدون

नहीं छूयेगी, और अगर छूयेगी भी तो केवल कुछ दिनों के लिए। (ऐ पैग़म्बर !) इनसे कहो कि तुम जो यह कहते हो तो क्या परमात्मा से तुमने कोई प्रतिज्ञा करा ली है कि अब वह उस प्रतिज्ञा से फिर नहीं सकता ? या तुम परमात्मा के नाम से एक ऐसी झूठी बात कह रहे हो जिसका तुमको कोई ज्ञान नहीं ? नहीं, (परमात्मा का नियम तो यह है कि कोई किसी भी वंश या जाति का व्यक्ति क्यों न हो) जिस किसी ने भी बुराई कमाई और जो पापों से घिर गया, वह नारकी अर्थात् सदा नरक में रहनेवाला है, और जिस किसी ने भी ईमान (विश्वास) का मार्ग ग्रहण किया और जो सदाचारी हुआ वह बहिश्ती है और सदा बहिश्त (स्वर्ग) में रहने वाला है। (सू० २, आ० ७४, ७५)

सूरा ४ में सिर्फ़ यहूदियों और ईसाइयों को ही नहीं, बल्कि सब को संबोधन करते हुए, साफ़ साफ़ एलान किया गया है, जिसे जान लेने के बाद किसी प्रकार के भी सन्देह या भ्रम की गुञ्जाइश नहीं रहती।

ليس بامانيكم ولا اماني
اهل الكتاب - من يعمل
سوء يجز به و لا يجد له من
دون الله وليا و لا نصيرا

(मुसलमानो! याद रखो, मुक्ति और कल्याण) न तो तुम्हारी इच्छा पर निर्भर है और न अन्य ईश्वरीय ग्रन्थ रखने वालोंकी इच्छा पर ही। (ईश्वरीय नियम तो यह है कि) जो कोई भी बुराई करेगा उसका फल उसे भोगना होगा। उस समय न तो किसी की मित्रता ही उसे ईश्वरीय कोप से बचा सकेगी और न किसी की सहायता (सू० ४, आ० १२३)

इन धार्मिक दलबन्दियों ही के परिणामरूप यहूदी समझते थे कि सच्चाई और ईमानदारी की जो कुछ भी आज्ञाएं ईश्वर ने दी हैं वह इसलिए नहीं हैं कि सब मनुष्यों के साथ सच्चाई और ईमानदारी का व्यवहार किया जाय, बल्कि केवल इसलिए हैं कि एक

यहूदी दूसरे यहूदी के साथ बुराई न करे। वे कहते थे कि अगर कोई व्यक्ति हमारा सहधर्मी नहीं है तो हमारे लिए उचित है कि हम जिस तरह भी चाहें, उससे फ़ायदा उठायें, सच्चाई और ईमानदारी के नियमों को ध्यान में रखने की हमें कोई आवश्यकता नहीं। इसलिए व्यापार में सूद लेने की मनाई उन्होंने सिर्फ अपने ही सहधर्मियों तक परिमित कर दी थी, और आज तक उनका यही व्यवहार चला आता है। वे कहते हैं कि एक यहूदी को दूसरे यहूदी से सूद नहीं लेना चाहिए। लेकिन एक यहूदी अगर किसी ग़ैर यहूदी से सूद ले तो कोई हरज नहीं। क़ुरान उनके इस विश्वास का ज़िक्र करते हुए उसे उनका एक बहुत बड़ा भ्रम क़रार देता है।

و اخذهم الربوا و قد نهوا عنه و اكلهم اموال الناس بالباطل

उनका (यहूदियों का) सूद खाना, हालांकि वे इससे रोक दिये गये थे, और उनकी यह बात कि लोगों का माल अनुचित उपायों से खा लेते थे......। (सू० ४, आ० ५९)

इसी तरह जो यहूदी अरब में निवास करते थे, वे कहते थे कि अरब के अशिक्षित निवासियों के साथ व्यवहार करने में हमें दियानतदारी और सच्चाई की कोई आवश्यकता नहीं, ये लोग मूर्तिपूजक हैं, हम इन लोगों का धन जिस तरह भी खा लें हमारे लिए जायज़ है।

ذلك بانهم قالوا ليس علينا فى الاميين سبيل - يقولون على الله الكذب وهم يعلمون - بلي من اوفى بعهده واتقى فان الله يحب المتقين

(यहूदियों की) इस बेईमानी का कारण यह है कि वे कहते हैं कि (अरब के इन) अशिक्षित लोगों के साथ (बेईमानी करने में) हमसे कोई पूछ-ताछ नहीं होगी (जिस तरह भी हम चाहें इनका माल खा ले सकते हैं, हालांकि) ऐसी बात कह कर वे साफ़ परमात्मा के नाम पर झूठ गढ़ते हैं। वे जानते हैं कि ईश्वरीय धर्म की यह आज्ञा नहीं हो सकती। हां, (इनसे पूछा जायगा और अवश्य पूछा जायगा, क्योंकि परमात्मा का नियम तो यह है कि) जो कोई अपने वचन को सच्चाई से पूरा करता है और बुराई से बचता है, वही परमात्मा की प्रसन्नता प्राप्त करता है, और परमात्मा बुराई से बचनेवालों से प्रेम करता है। (सू० ३, आ० ७०)

यानी, ऐसा विश्वास रखना परमात्मा के धर्म पर प्रत्यक्ष झूठ थोपना है। ईश्वर का बताया हुआ धर्म तो यह है कि हर एक व्यक्ति के साथ नेकी करनी चाहिए, और हर अवस्था में सच्चाई और दियानतदारी से काम लेना चाहिए, चाहे कोई भी व्यक्ति हो और किसी भी धर्म या सम्प्रदाय का क्यों न हो, क्योंकि सफ़ेद हर हाल में सफ़ेद है और काला हर हाल में काला है। कोई सफ़ेद वस्तु इसलिए काली नहीं हो सकती कि वह किसी विशेष आदमी को दी गई है, और कोई काली चीज़ इसलिए सफ़ेद नहीं हो जा सकती कि वह किसी जाति अथवा सम्प्रदायविशेष के हाथ से निकली है। इसलिए दियानतदारी हर हाल में दियानतदारी है और बद-दियानती हर हालत में बद-दियानती है।

क़ुरान के आविर्भाव के समय अरब में तीन बड़े बड़े मज़हबी गिरोह थे, यहूदी, ईसाई, और अरब के मूर्तिपूजक। और ये तीनों हज़रत इब्राहीम को एक समान प्रतिष्ठा और आदर की दृष्टि से देखते थे, क्योंकि तीनों सम्प्रदायवालों के आदिपुरुष इब्राहीम ही थे। इसलिए क़ुरान इन धार्मिक गिरोहवान्दियों की गुमराही को स्पष्ट करने के लिए एक निहायत सीधा सादा प्रश्न इन तीनों के सामने रखता है। वह कहता है कि यदि दीन की सच्चाई सम्प्रदायविशेष पर ही निर्भर है तो बतलाओ हज़रत इब्राहीम किस सम्प्रदाय के थे? उस समय तक न तो यहूदी-मत का आविर्भाव हुआ था और न ईसाई-मत का, और न उस समय तक किसी और ही सम्प्रदाय का अस्तित्व था? फिर यदि हज़रत इब्राहीम

किसी भी सम्प्रदायविशेष के न होने पर भी सच्चे धर्म के मार्ग पर थे, तो बतलाओ वह मार्ग कौन सा था ? क़ुरान कहता है कि वह उसी सच्चे धर्म का मार्ग था जो तुम्हारी अपनी गढ़ी हुई दलबन्दियों से उच्चतर और अखिल मानवजाति के लिए एक समान मुक्ति का मार्ग है—यानी एक ही परमेश्वर की सीधी सादी उपासना और सदाचार की ज़िन्दगी।

و قالوا كونوا هودا او نصارى تهتدوا - قل بل ملة ابراهيم حنيفا - وما كان من المشركين

और यहूदी कहते हैं, यहूदी हो जाओ, हिदायत पाओगे। ईसाई कहते हैं, ईसाई हो जाओ, हिदायत पाओगे। (ऐ पैगम्बर !) तुम कह दो, नहीं, (परमात्मा की विश्वव्यापी हिदायत तुम्हारी इन गिरोहबन्दियों में नहीं जकड़ी जा सकती), हिदायत का रास्ता तो वही सीधा रास्ता है जो इब्राहीम का था और निःसन्देह इब्राहीम मुशरिक* न था। (सू० २, आ० १२९)

* जो एक ईश्वर को छोड़ कर किसी दूसरे की पूजा करे।

يا اهل الكتاب لم تحاجون في ابراهيم و ما أنزلت التورية و الانجيل الا من بعده - افلا تعقلون

ए धर्मग्रन्थों के मानने-वालो! तुम इब्राहीम के बारे में क्यों बहस करते हो जब कि यह बात बिलकुल साफ़ है कि तौरात और इञ्जील इब्राहीम के बहुत बाद उतरीं? क्या ऐसी मोटी बात समझने की बुद्धि भी तुममें नहीं है? (सू० ३, आ० ५८)

यानी, क़ुरान यहूदियों और ईसाइयों से सवाल करता है कि तुम्हारी यह गिरोहबन्दियां ज़्यादा से ज़्यादा तौरात और इञ्जील के समय से शुरू होती हैं, तो फिर बतलाओ तौरात से पहले भी ऐसे आदमी मौजूद थे या नहीं जिनको ईश्वर से हिदायत मिली हो? अगर थे, तो उनका मार्ग क्या था? स्वयं तुम्हारे वंश के, यानी इसराईल वंश के, तमाम पैग़म्बरों का मार्ग क्या था? हज़रत इब्राहीम ने अपने बेटों और पोतों को जिस धर्म की शिक्षा दी थी वह धर्म कौन सा था? हज़रत याक़ूब मृत्यु-शय्या पर जब अपने बेटों को ईश्वरीय धर्म पर दृढ़ रहने का अन्तिम उपदेश दे रहे थे, तो वह धर्म कौन सा था? ज़ाहिर है कि वह यहूदी-मत या ईसाई-मत की गिरोहबन्दी नहीं हो सकती, क्योंकि ये दोनों गिरोहबन्दियां हज़रत मूसा और हज़रत ईसा के

नाम पर की गई हैं, और ये दोनों हज़रत इब्राहीम और हज़रत याक़ूब से कई सौ वर्ष बाद पैदा हुए। इसलिए सिद्ध हुआ कि इन तुम्हारे गढ़े हुए दायरों से परे भी मुक्ति का कोई उच्चतर मार्ग मौजूद है, जो उस समय भी मानवसमाज के सामने था जब कि तुम्हारे इन सम्प्रदायों का नाम निशान तक न था। क़ुरान कहता है कि यही मार्ग धर्म का वास्तविक मार्ग है, और इसे प्राप्त करने के लिए किसी गिरोहबन्दी की आवश्यकता नहीं, बल्कि आवश्यकता है विश्वास और सदाचरण की।

ام کنتم شهداء اذ حضر
يعقوب الموت اذ قال
لبنيه ما تعبدون من بعدي و
قالوا نعبد الهک و اله آباءک
ابراهيم و اسمعيل و اسحاق
الها واحدا و نحن له مسلمون

फिर क्या तुम उस समय मौजूद थे जब या.क़ूब के सिरहाने मृत्यु खड़ी थी और उसने अपनी सन्तान से पूछा था कि बतलाओ मेरे बाद तुम किसकी उपासना करोगे, उन्होंने उत्तर दिया था कि हम उसी एक ईश्वर की उपासना करेंगे जिसकी तुम और तुम्हारे पूर्वजों, इब्राहीम, इस्माईल, और इसहाक़ ने की है, और हम परमात्मा के आज्ञाकारी रहेंगे? (सू० २, आ० १२७)

.कुरान कहता है ईश्वरीय धर्म की जड़ यही है कि मनुष्यमात्र परस्पर भाई और सब एक हैं। इसकी जड़ भेद और घृणा नहीं है। .खुदा के जितने भी रसूल दुनिया में आये सब ने यही शिक्षा दी कि तुम सब बुनियादी तौर पर एक ही गिरोह और एक ही जाति हो, और तुम सब का पालनहार भी एक ही है। इसलिए उचित है कि सब उसी एक परवरदिगार की बन्दगी करें, और एक घराने के भाई-बन्दों की तरह मिल जुल कर रहें। यद्यपि प्रत्येक धर्म के संस्थापक ने इसी मार्ग का उपदेश दिया था, तथापि हर धर्म के अनुयायी इस मार्ग से हट गये। परिणाम यह हुआ कि प्रत्येक देश, प्रत्येक जाति, और प्रत्येक वंश ने अपना अलग अलग जत्था बना लिया और प्रत्येक जत्था अपने ही तौर तरीक़ों में मग्न हो गया।

.कुरान ने पिछले पैग़म्बरों और धर्म-प्रवर्तकों में से जिनके उपदेश उद्धृत किये हैं उन सब के सिद्धान्तों का मुख्य तत्त्व भी यही है, और प्राय: अधिकांश के उपदेशों का अन्त धर्म की एकता और मनुष्य के विश्व-भ्रातृत्व पर ही होता है।

जैसे, सूरा २३ में सब से पहले हज़रत नूह के उपदेशों का वर्णन आता है।

ولقد ارسلنا نوحا الى
قومه فقال يا قوم اعبدوا الله
ما لكم من اله غيره - افلا
تتقون - (٢٣ : ٢٣)

इसके बाद उन रसूलों के उपदेशों की तरफ़ इशारा किया

ثم انشانا من بعده قرنا
آخرين فارسلنا فيهم رسولا

गया है जो हज़रत नूह के बाद हुए।

منهم ان اعبدوا الله ما لكم من اله غيره - (٣٢)

फिर हज़रत मूसा का ज़िक्र है।

ثم ارسلنا موسى و اخاه هارون- (٤٧)

हज़रत मूसा के बाद हज़रत ईसा के उपदेश आते हैं।

و جعلنا ابن مريم و امه آية (٥٢)

अन्त में इन सब का ज़िक्र करने के बाद निम्नलिखित सच्चाई का एलान किया गया है—

और हमने सब पैग़म्बरों को यही आज्ञा दी थी कि पाक और साफ़ चीज़ें खाओ और सदाचार का जीवन व्यतीत करो। तुम जो कुछ भी करते हो उससे मैं बेख़बर नहीं हूँ। और (देखो) यह तुम्हारा गिरोह वास्तव में एक ही गिरोह है, और मैं तुम सब का पालनहार हूँ। (इस लिए अलग न हो, और) अवज्ञा से बचो। लेकिन फिर ऐसा हुआ कि लोगों ने एक दूसरे से कट कर अलग

يا ايها الرسل كلوا من الطيبات و اعملوا صالحا - انى بما تعملون عليم - و ان هذه امتكم امة واحدة و انا ربكم فاتقون - فتقطعوا امرهم بينهم زبرا - كل حزب بما لديهم فرحون

अलग धर्म बना लिए, हर टोली के पल्ले जो कुछ पड़ गया वह उसी में मग्न है। (सू० २३, आ० ५३)

यानी, एक के बाद दूसरे सब पैग़म्बरों ने यही शिक्षा दी थी कि ईश्वर की बन्दगी करो और सदाचरण का जीवन व्यतीत करो। परमात्मा के सम्मुख तुम सब एक ही गिरोह और एक ही सम्प्रदाय हो। तुम सब का एक ही पालनहार है। तुममें से कोई गिरोह दूसरे गिरोह को अपने से अलग न समझे और न कोई गिरोह दूसरे गिरोह का विरोधी हो। فتقطعوا امرهم بينهم زبرا लेकिन लोगों ने इस शिक्षा को भुला दिया। अपनी अपनी अलग अलग टोलियां बना लीं كل حزب بما لديهم فرحون हर टोली उसी में मग्न है जो उसके पल्ले पड़ गया है।

धार्मिक गिरोहबन्दी के रीति-रिवाजों में से एक रस्म वह है जिसे ईसाई-मत ने अख़्तियार कर लिया और जिसे वह बप्तिस्मे के नाम से पुकारता है। वास्तव में यह एक यहूदी रस्म थी जो पापों का प्रायश्चित्त करते समय अदा की जाती थी। इसलिए उसका मूल्य एक मामूली रस्म के मूल्य से अधिक नहीं है। लेकिन ईसाइयों ने इसे मुक्ति और कल्याण की बुनियाद समझ ली है। जब तक कोई मनुष्य हज़रत ईसा मसीह के नाम पर बप्तिस्मा न ले तब तक वह नेक और धार्मिक नहीं समझा जा सकता है, और न अन्त में

उसे मुक्ति ही प्राप्त हो सकती है। .कुरान कहता है, यह कैसी गुमराही है कि मनुष्यों की मुक्ति और उनका कल्याण जिनका दारमदार सिर्फ़ उनके कर्मों पर है एक विधिविशेष के साथ आबद्ध कर दिया जाय! यह मनुष्य का ठहराया हुआ 'बप्तिस्मा' परमात्मा का बप्तिस्मा नहीं है। परमात्मा का बप्तिस्मा तो यह है कि तुम्हारे दिल ईश्वरनिष्ठा के रङ्ग में में रङ्ग जायँ।

صبغة اللہ - ومن احسن من اللہ صبغة - ونحن لہ عابدون

यह परमात्मा का रङ्ग है (यानी ईश्वरीय धर्म का स्वाभाविक 'बप्तिस्मा' है) और रंगने में परमात्मा से अच्छा और कौन हो सकता है? हम तो उसी की बन्दगी करनेवाले हैं। (सू० २, आ० १३८)

सूरा २ में जगह जगह यह भी कहा गया है कि ईश्वरीय धर्म का मार्ग कर्ममार्ग है, और प्रत्येक मनुष्य के लिए वही होता है जो उसके कर्मों की कमाई है। किसी मनुष्य की मुक्ति या उसके कल्याण में इस बात से कोई सहायता नहीं मिल सकती कि उसके गिरोह में बहुत से पैग़म्बर या महान् पुरुष हो चुके हैं या वह नेक मनुष्यों के वंश से है या किसी पिछली क़ौम के साथ उसका पुराना सम्बन्ध है।

تلك امة قد خلت . لها ما كسبت و لكم ما كسبتم و لا تسئلون عما كانوا يعملون

यह एक क़ौम थी जो गुज़र चुकी। उसके लिए वह था जो उसने अपने कर्मों से कमाया, और तुम्हारे लिए वह है जो तुम अपने कर्मों से कमाओ। उनके कर्मों के लिए तुमसे कोई पूछ-ताछ नहीं होगी। (सू० २, आ० १२८)

५ । क़ुरान का उपदेश ।

क़ुरान के पृष्ठों में कोई बात भी इतनी साफ़ दिखाई नहीं देती जितनी यह कि क़ुरान ने बार बार स्पष्ट और निर्णायक शब्दों में इस सच्चाई का एलान कर दिया है कि क़ुरान किसी नई मज़हबी गिरोहबन्दी का सन्देश लेकर संसार में नहीं आया, बल्कि वह विविध धर्मों की असली लड़ाइयों और झगड़ों से संसार को मुक्त कर उन सबको उसी एक मार्ग पर एकत्र कर देना चाहता है जो सब का एक सामान्य और सर्वसम्मत मार्ग है।

क़ुरान बार बार कहता है कि जिस मार्ग पर मैं लोगों को बुलाता हूँ वह कोई नया मार्ग नहीं, और न सत्य का कोई नया मार्ग हो ही सकता है। मेरा मार्ग वही मार्ग है जो सनातन से चला आता है और जिसकी ओर सब धर्मों के प्रवर्तकों ने मनुष्य को बुलाया है।

شرع لكم من الدين ما
وصى به نوحا و الذي
اوحينا اليک و ما وصينا به
ابراهيم و موسى و عيسى ان
اقيموا الدين و لا تتفرقوا
فيه

और (देखो) उसने तुम्हारे लिए धर्म की वही राह ठहराई है जिसकी वसीयत नूह से की गई थी, और जिस पर चलने की आज्ञा इब्राहीम, मूसा और ईसा को दी गई थी, (इन सब की

शिक्षा यही थी) कि अद्दीन (यानी परमात्मा का एक ही दीन) क़ायम रखो और इस मार्ग में अलग अलग न हो जाओ। (सू० ४२, आ० १३)

सूरा ४ में आया है—

انا اوحینا الیک کما اوحینا الی نوح والنبیین من بعده - و اوحینا الی ابراهیم و اسمعیل و اسحاق و یعقوب و الاسباط و عیسی و ایوب و یونس و هارون و سلیمان - و آتینا داود زبورا — و رسلا قد قصصناهم علیک من قبل و رسلا لم نقصصهم علیک

(ऐ पैग़म्बर !) हमने तुम्हारे पास उसी तरह अपनी 'वही' (ईश्वरीय आदेश) भेजी है जिस तरह नूह के और उन सब पैग़म्बरों के पास भेजी थी जो नूह के बाद हुए, और जिस तरह इब्राहीम, इस्माईल, इसहाक़, याक़ूब, याक़ूब के वंशजों, ईसा, अय्यूब, यूनुस, हारून, सुलैमान, इत्यादि के पास भेजी थी, और जिस तरह हमने दाऊद को ज़बूर प्रदान की थी। इनके सिवा और भी पैग़म्बर हुए हैं जिनमें से कुछ का हाल हम तुम्हें सुना चुके हैं

और कुछ का नहीं। (सू० ४, आ० १६३)

सूरा ६ में क़ुरान से पहले के रसूलों का उल्लेख करते हुए इस्लाम के पैग़म्बर से कहा गया है—

اولئک الذین هدي الله فبهديهم اقتده

ये वे लोग हैं जिनको परमात्मा ने सत्य का मार्ग दिखाया। (इसलिए ऐ पैग़म्बर !) तुम भी इन्हीं की हिदायत का (अर्थात् इन्हीं के मार्ग का) अनुसरण करो। (सू० ६, आ० ९०)

इसीलिए क़ुरान के उपदेश की पहली बुनियाद यह है कि सब धर्मों के संस्थापकों का और सब ईश्वरीय ग्रन्थों का समान रूप से समर्थन किया जाय, यानी यह विश्वास किया जाय कि वे सब सत्य पर थे, सब ईश्वर का सत्य संदेश पहुँचानेवाले थ, और सब ने एक ही सत्य और एक ही नियम की शिक्षा दी है, और उन सब की सर्वसम्मत शिक्षा के अनुसार चलना ही हिदायत और कल्याण का सच्चा मार्ग है।

قل آمنا بالله و ما انزل علينا , ماانزل علی ابراهيم

(ऐ पैग़म्बर !) कह दो, हमारा तरीक़ा तो यह है कि हम

و اسمعيل و اسحاق و يعقوب
و الاسباط و اوتي موسى و
عيسى والنبيون من ربهم -
لا نفرق بين احد منهم و
نحن له مسلمون

परमात्मा पर विश्वास करते हैं और जो कुछ आदेश हम को (ईश्वर की ओर से) दिया गया है उस पर विश्वास करते हैं, और जो कुछ इब्राहीम, इस्माईल, इसहाक़, याक़ूब, और याक़ूब के वंशवालों को आदेश दिया गया था, उस सब पर विश्वास रखते हैं, और इसी तरह जो कुछ मूसा, ईसा, और दुनिया के तमाम पैग़म्बरों को उनके पालनहार की ओर से दिया गया है उस सब पर हमारा विश्वास है। हम इनमें से किसी एक को भी दूसरे से अलग नहीं करते (कि उसे न मानें और दूसरों को मानें, हम सब का समान रूप से समर्थन करते हैं), और हम परमात्मा के आज्ञाकारी हैं। (उसकी सच्चाई जहाँ कहीं और जिस किसी की ज़बानी भी आई हो उस पर हमारा

विश्वास है ।)—सू० ३,
आ० ७८ ।

.कुरान ने इस आयत में और भी अनेक स्थलों पर ईश्वर के पैग़म्बरों में भेदभाव रखने को एक बहुत बड़ी गुमराही क़रार दिया है, और सच्चाई की राह ही यह बतलाई है कि तफ़रीक़-बैनर्रुसुल से इनकार किया जाय। 'तफ़रीक़-बैनर्रुसुल' का अर्थ यह है कि .खुदा के रसूलों का समर्थन करने में भेदभाव किया जाय, यानी यह समझना कि इनमें से अमुक सच्चा था और अमुक सच्चा न था, अथवा किसी एक की सच्चाई को मानना और दूसरे की सच्चाई को न मानना, अथवा शेष सब की सच्चाई को मानना और किसी एक से इनकार कर देना। .कुरान कहता है कि प्रत्येक ऐसे सच्चे व्यक्ति का, जो ईश्वरीय धर्म के मार्ग पर चलना चाहता है, यह कर्त्तव्य है कि वह बग़ैर किसी भेदभाव के सब पैग़म्बरों, सब धर्मग्रन्थों, और सब धर्मों के उपदेशों पर एक समान रूप से विश्वास करे और किसी एक से भी इनकार न करे। उसका तरीक़ा यह होना चाहिए कि वह कहे कि "सच्चाई जहाँ भी प्रकट हुई है और जिस किसी के भी मुख से प्रकट हुई है सच्चाई है और उस पर मेरा विश्वास है।"

آمن الرسول بما أنزل
اليه من ربه و المؤمنون -

.खुदा का पैग़म्बर उस
(ईश्वरीय वाणी) पर विश्वास

كل آمن بالله و ملئكته
و كتبه و رسله - لا نفرق
بين احد من رسله - و
قالوا سمعنا و اطعنا غفرانك
ربنا و اليك المصير

रखता है जो उसके पालनहार की तरफ़ से उस पर उतरी है, और उसके अनुयायी भी उस वाणी पर विश्वास करते हैं। ये लोग परमात्मा पर, उसके फ़रिश्तों पर, उसके धर्मग्रन्थों पर, और उसके रसूलों पर विश्वास करते हैं। (उनके विश्वास की पद्धति यही है कि वे कहते हैं कि) हम परमात्मा के रसूलों में से किसी को दूसरे से अलग नहीं करते (कि किसी एक को मानें और दूसरे को न मानें। हम सब का समान रूप से समर्थन करते हैं। ये वे लोग हैं जिन्होंने धर्मों के संस्थापकों की पुकार सुन कर) कहा, "ऐ ख़ुदा! हमने तेरा सन्देश सुना और तेरी आज्ञा मानी, तेरी क्षमा हमें प्राप्त हो क्योंकि हम सब को अन्त में लौट कर तेरीही ओर आना है। (सू० २, आ० २८५)

.कुरान कहता है ख़ुदा एक ही है, उसकी सच्चाई एक है, लेकिन उस सच्चाई का पैग़ाम बहुतों ने पहुँचाया है। फिर अगर तुम किसी एक पैग़म्बर की बात का समर्थन करते हो और दूसरों से इनकार करते हो तो इसका मतलब यह हुआ कि एक ही सच्चाई को एक जगह मान लेते हो दूसरी जगह ठुकरा देते हो, अथवा एक ही बात मान भी लेते हो और रद्द भी कर देते हो। ज़ाहिर है ऐसा मानना मानना नहीं है, बल्कि बहुत ही बुरे ढङ्ग का इनकार है।

.कुरान कहता है, .खुदा की सच्चाई उसकी अन्य सब बातों की तरह उसकी विश्व-व्यापी देन है। वह न तो किसी युगविशेष से सम्बन्ध रखती है, न किसी वंश अथवा जातिविशेष से, और न किसी सम्प्रदायविशेष से ही। तुमने अपने लिए तरह तरह की जातीय, भौगोलिक और वंशगत हदें बना ली हैं, लेकिन .खुदा की सच्चाई के लिए तुम कोई इस तरह का भेदभाव नहीं कर सकते। .खुदा की सच्चाई की न तो कोई जाति है, न कोई वंश, न कोई भौगोलिक हदबन्दी है, और न कोई साम्प्रदायिक गिरोहबन्दी। वह .खुदा के सूरज की तरह प्रत्येक स्थान में चमकती है और मनुष्यमात्र को रोशनी पहुँचाती है। अगर तुम परमात्मा की सच्चाई की खोज में हो तो उसे एक ही कोने में मत ढूँढो, वह हर जगह प्रकट होती है और हर युग में अपना प्रकाश फैलाती है। तुम्हें किसी ख़ास समय का, जाति का, देश का, भाषा का, और तरह तरह की गिरोहबन्दी का उपासक न होकर केवल ख़ुदा का

और उसकी विश्वव्यापी सच्चाई का उपासक होना चाहिए। उसकी सच्चाई चाहे कहीं भी आई हो और चाहे जिस रूप में आई हो वह तुम्हारी निधि है और तुम उसके उत्तराधिकारी हो।

इसलिए क़ुरान ने 'तफ़रीक़ बैनर्रुसुल' की राह को जहाँ तहाँ इनकार (नास्तिकता) की राह क़रार दिया है और ईमान की राह उसके विपरीत यह बतलाई है कि बग़ैर भेदभाव के सब को माना जाय। क़ुरान कहता है कि इस संसार में मार्ग सिर्फ़ दो ही हैं, तीसरा नहीं हो सकता। ईमान का मार्ग यह है कि सब को मानो, इनकार की राह यह है कि सबका या किसी एक का इनकार करो। यहाँ किसी एक के इनकार का भी वही अर्थ है जो सबके इनकार का है।

जो लोग परमात्मा और उसके पैग़म्बरों को नहीं मानते और चाहते हैं कि परमात्मा और उसके पैग़म्बरों में भेद करें (यानी किसी को ख़ुदा का रसूल मानें और किसी को न मानें), और कहते हैं कि इनमें से किसी को हम मानते हैं और किसी को नहीं मानते, फिर चाहते हैं कि (अविश्वास और	ان الذین یکفرون باللہ و رسلہ و یریدون ان یفرقوا بین اللہ و رسلہ و یقولون نؤمن ببعض و نکفر ببعض و یریدون ان یتخذوا بین ذلک سبیلا اولئک هم لکافرون حقا - و اعتدنا للکافرین عذابا مهینا - و الذین آمنوا باللہ و رسلہ و لم یفرقوا بین احد منهم اولئک سوف

يؤتيهم اجورهم - و كان الله غفورا رحيما

विश्वास के) बीच का कोई तीसरा मार्ग अख़्तियार कर लें। विश्वास करो, ये ही लोग हैं जिनके अविश्वास (कुफ़्र) में कोई शक नहीं। जिन लोगों की राह अविश्वास की राह है उनके लिए उन्हें अपमानित करनेवाला ईश्वरीय कोप तैयार है। लेकिन जो लोग परमात्मा और उसके सब पैग़म्बरों पर विश्वास करते हैं और किसी एक पैग़म्बर को भी दूसरे से पृथक् नहीं करते (यानी किसी एक की सच्चाई से भी इनकार नहीं करते), निस्सन्देह ये ही लोग हैं जिन्हें परमात्मा शीघ्र उनके सुकर्मों का फल देगा। वह बड़ा ही दयालु और कृपालु है। (सू० ४, आ० १४९)

सूरा २ में सच्चे विश्वासी की राह यह बतलाई गई है—

و الذين يؤمنون بما أنزل اليك و ما أنزل من قبلك -

और वे लोग जो उस सच्चाई पर विश्वास करते हैं

و بالاخرة هم يوقنون - اولئک
علی هدی من ربهم و اولئک
هم المفلحون

जो इस्लाम के पैग़म्बर पर प्रकट हुई है और उन सब सच्चाइयों पर भी विश्वास करते हैं जो इस्लाम से पहले दुनिया में प्रकट हो चुकी है, और जो आख़िरत (आइन्दा) की ज़िन्दगी पर भी विश्वास रखते हैं, ये ही लोग हैं जो अपने परवरदिगार की ठहराई हुई हिदायत पर हैं, और ये ही हैं जिन्होंने कल्याण प्राप्त किया है। (सू० २, आ० २)

क़ुरान कहता है, अगर तुम्हें इस बात से इनकार नहीं है कि समस्त विश्व का सृजनहार एक ही है और वही परवरदिगार समान रूप से प्राणीमात्र का भरण-पोषण कर रहा है, तो फिर तुम इस बात से कैसे इनकार कर सकते हो कि उसके आध्यात्मिक सत्य का नियम भी एक ही है, और वह नियम भी एक ही तरह पर मनुष्यमात्र को दिया गया है ? क़ुरान कहता है, तुम सब का परवरदिगार एक है, तुम सब एक ही परमात्मा के नाम-लेवा हो, तुम सब के पथप्रदर्शकों ने तुम्हें एक ही पथ दिखलाया है, फिर यह कैसी गुमराही की पराकाष्ठा और बुद्धि का दिवाला है कि सूत्र एक है, लक्ष्य एक है, लेकिन एक समुदाय दूसरे समुदाय का शत्रु है,

एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से घृणा करता है, और फिर ये सब लड़ाई झगड़े किस के नाम पर किये जाते हैं ? उसी परमात्मा और उसी परमात्मा के धर्म के नाम पर जिसने सब को एक ही चौखट पर झुकाया था और सब को एक भ्रातृत्व के सूत्र में बांधा था।

قل يا اهل الكتاب هل
تنقمون منا الا ان آمنا بالله
و ما انزل الينا و ما انزل
من قبلك و ان اكثرهم
فاسقون

इन लोगों से कहो कि ऐ धर्मग्रन्थवालो ! तुम जो हमारा विरोध करने के लिए कटिबद्ध हो गये हो तो बतलाओ, इसके सिवा हमारा क्या अपराध है कि हम परमात्मा पर विश्वास करते हैं और जो कुछ सत्य हम पर प्रकट हुआ है और जो कुछ हम से पहले प्रकट हो चुका है, उस सब पर विश्वास रखते हैं ? (फिर क्या ईश्वर की उपासना करना और उसके पैग़म्बरों का समर्थन करना तुम्हारे निकट अपराध और ऐब हैं ? अफ़सोस तुम पर !) तुम में अधिकांश ऐसे ही हैं जो सत्य के मार्ग से सर्वथा पृथक् हैं । (सू० ५, आ० ६४)

ان الله ربي و ربكم
فاعبدوه - هذا صراط مستقيم

देखो, खुदा तो मेरा और तुम्हारा दोनों का परवरदिगार है। इसलिए उसकी उपासना करो, यही धर्म का सीधा मार्ग है। (सू० १९, आ० ३९)

قل أتحاجوننا في الله
و هو ربنا و ربكم - و لنا
اعمالنا و لكم اعمالكم -
و نحن له مخلصون

(ऐ पैग़म्बर ! इन से) कहो, क्या तुम परमात्मा के विषय में हम से झगड़ा करते हो यद्यपि हमारा और तुम्हारा दोनों का पालनहार वही है, और हमारे लिए हमारे कर्म हैं, तुम्हारे लिए तुम्हारे कर्म (यानी प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्मानुसार फल भोगना है; फिर इस बारे में झगड़ा क्यों करते हो) ?—सू० २, आ० १३९।

यह बात याद रखनी चाहिए कि .कुरान में जहाँ कहीं किसी को सम्बोधन किया गया है, जैसे कि ऊपर की आयत में "इन्नल्लाह रब्बी व रब्बु-कुम्," अर्थात् परमात्मा मेरा और तुम्हारा दोनों का प्रतिपालक है। अथवा, 'इलाहुना व इलाहुकुम् वाहिद'—हमारा और

तुम्हारा दोनों का ख़ुदा एक ही है ; अथवा, 'अ तोहाज्जूनना फ़िल्लाहि व होव रब्बुना व रब्बुकुम् व लना अअमालुना व लकुम् अअमालुकुम्,' अर्थात् 'क्या तुम .ख़ुदा के बारे में हम से झगड़ा करते हो यद्यपि हमारा और तुम्हारा सब का पालनहार वही है और हमारे लिए हमारे कर्म और तुम्हारे लिए तुम्हारे,'— वहाँ वहाँ इन सब उक्तियों का उद्देश्य इसी तत्त्व पर ज़ोर देना है, यानी जब सब का पालनहार एक ही है, और प्रत्येक व्यक्ति को उसके कर्मानुसार ही फल मिलते हैं, तो फिर .ख़ुदा और धर्म के नाम पर संसार भर में ये लड़ाई और झगड़े क्यों हैं ? .क़ुरान बार बार कहता है कि मेरी शिक्षा इसके सिवा और कुछ नहीं है कि ईश्वर की उपासना और सदाचरण ही मनुष्य का कर्त्तव्य है, मैं किसी धर्म को झूठा नहीं कहता, मैं किसी धर्म के प्रवर्तक से इनकार नहीं करता, सबका समान रूप से समर्थन करता हूं, और उन सबकी सामान्य और सर्वसम्मत शिक्षा ही मेरी शिक्षा है; फिर मेरे विरुद्ध समस्त धर्मानुयायियों ने लड़ाई का एलान क्यों कर दिया है ?

यही कारण है कि .क़ुरान ने किसी भी धर्म के अनुयायी से यह नहीं चाहा कि वह कोई नया मत अथवा नया सिद्धान्त स्वीकार करे, बल्कि .क़ुरान हर गिरोह के सामने यही मांग पेश करता है कि तुम अपने धर्म की वास्तविक शिक्षा पर सच्चाई के साथ अमल करो। .क़ुरान कहता है कि अगर तुमने ऐसा कर लिया तो मेरा काम पूरा हो गया, क्योंकि मेरा सन्देश कोई नया सन्देश नहीं है

बल्कि वही सनातन सार्वभौमिक सन्देश है जो समस्त धर्म संस्थापकों ने दिया है।

قل يا اهل الكتاب لستم
على شيء حتى تقيموا
التورية و الانجيل و ما
انزل اليكم من ربكم و
ليزيدن كثيرا منهم ما انزل
اليك من ربك طغيانا و كفرا -
فلا تاس على القوم الكافرين -
ان الذين آمنوا و الذين هادوا
و الصابئون و النصارى من
آمن بالله و اليوم الاخر و
عمل صالحا فلا خوف عليهم
و لا هم يحزنون

(ऐ पैग़म्बर !) कह दो कि ऐ धर्मग्रन्थवालो ! जब तक तुम तौरात और इञ्जील पर और उन सब धर्मग्रन्थों पर जो तुम पर प्रकट हुए हैं, ठीक ठीक अमल नहीं करोगे तब तक तुम्हारे पास धर्म का कोई अंश भी नहीं है। और (ऐ पैग़म्बर !) तुम्हारे पालनहार की ओर से जो कुछ सत्य तुम्हारे ऊपर प्रकट हुआ है, (बजाय इसके कि ये लोग उससे हिदायत हासिल करें, तुम देखोगे कि) इनमें से बहुतों का अविश्वास और उनकी उद्दण्डता और भी ज़्यादा बढ़ जायगी। जिन लोगों ने सच्चाई की जगह सत्य से इनकार करने की राह ग्रहण कर ली है, (वे कभी माननेवाले नहीं हैं)। तुम इनकी हालत

पर व्यर्थ अफ़सोस मत करो। चाहे कोई तुम्हारी बताई हुई राह का माननेवाला हो, चाहे कोई यहूदी हो, चाहे ईसाई हो, चाहे साबी हो, या कोई और हो, (ईश्वर का क़ानून यह है कि) जो कोई भी परमात्मा पर और आख़िरत के दिन (अर्थात् अन्त में सब को अपने अपने कर्मों के फल मिलने के दिन) पर विश्वास करता है, और उसके कर्म भी अच्छे हैं, तो उसके लिए न तो किसी प्रकार का खटका है और न किसी प्रकार का शोक। (सू० ५, आ० ७३)

यही कारण है कि .क़ुरान ने उन सब सत्यनिष्ठ मनुष्यों के विश्वास और व्यवहार को पूरी उदारता के साथ ठीक बताया है जो कि .क़ुरान के आविर्भाव के समय भिन्न भिन्न धर्मों में मौजूद थे और जिन्हों ने अपने अपने धर्मों के वास्तविक सार को नष्ट नहीं किया था। यह ठीक है कि .क़ुरान ऐसे लोगों की संख्या को बहुत ही कम बताता है, और कहता है कि अधिकतर संख्या उन्हीं लोगों

की है जिन्होंने ईश्वरीय धर्म की विश्वास-सम्बन्धी और व्यवहार-सम्बन्धी सच्चाई को एक बारगी नष्ट कर दिया है।

ليسوا سواء - من
اهل الكتاب أمة قائمة
يتلون آيات الله آناء الليل
و هم يسجدون - يؤمنون
بالله و اليوم الاخر و يامرون
بالمعروف و ينهون عن المنكر
و يسارعون فى الخيرات - و
اولئك من الصالحين - و
ما يفعلون من خير فلن
تكفروه - و الله عليم
بالمتقين -

यह बात नहीं है कि सब लोग एक ही तरह के हों। इन्हीं धर्मग्रन्थवालों में कुछ ऐसे भी हैं जो वास्तविक धर्म में क़ायम हैं। वे रात को उठ उठ कर ईश्वर की वाणी (धर्मग्रन्थों) का पाठ करते हैं और प्रभु के सम्मुख नतमस्तक रहते हैं। वे ईश्वर पर और आख़िरत के दिन पर विश्वास करते हैं, नेकी की आज्ञा देते हैं, बुराई से रोकते हैं और स्वयं नेकी की राह में तेज़-क़दम हैं। निस्सन्देह वे नेक मनुष्यों में से हैं। याद रखो, ये लोग जो कुछ भी नेकी करते हैं, हरगिज़ ऐसा नहीं होगा कि उसकी क़द्र न की जाय और वह नष्ट हो जाय। मनुष्यों का हाल परमात्मा से छिपा नहीं

है। वह जानता है कि कौन धर्मनिष्ठ है और कौन नहीं। (सू० ३, आ० १११)

منهم أمة مقتصدة - و كثير منهم ساء ما يعملون

उनमें से एक गिरोह ऐसे लोगों का है जो बीच के रास्ते पर हैं। लेकिन अधिक संख्या ऐसे ही लोगों की है जो जो कुछ करते हैं बहुत बुरा करते हैं। (सू० ५, आ० ७१)

क़ुरान जगह जगह अपने से पहले के धर्मग्रन्थों का समर्थन करता है, और इस बात पर ज़ोर देता है कि वे झूठे नहीं हैं। अन्य धर्मग्रन्थवालों से क़ुरान बार बार कहता है—'व आमिनू बिमा अन्ज़ल्तो मुसद्दिक़ल्लिमा मअकुम् (२. ३८) यानी उस किताब पर विश्वास करो जो तुम्हारी किताब का समर्थन करती हुई प्रकट हुई है। इन सब से क़ुरान का उद्देश्य उसी सचाई पर ज़ोर देना है, यानी यह कि जब मेरी शिक्षा तुम्हारे पवित्र ग्रन्थों के विरुद्ध कोई नई बात पेश नहीं करती और न उनसे तुम्हें पृथक करना चाहता है, बल्कि सब तरह से उनकी पुष्टि और उनका समर्थन करती है, तो फिर तुममें और मुझमें लड़ाई क्यों हो? तुम मेरे विरुद्ध युद्ध की घोषणा क्यों करते हो?

क़ुरान ने नेकी के लिए 'मारूफ़' का, और बुराई के लिए 'मुन्कर' शब्द का उपयोग किया है। 'वअमुर् बिल मारूफ़े वन्ह

अनिल् मुनकर' (३१. ३६)। 'मारूफ़' 'अरफ़' धातु से है जिसका अर्थ पहचानना है। इस लिए मारूफ़ वह बात हुई जो जानी पहचानी हुई हो। 'मुनकर' का अर्थ इनकार करना है, यानी ऐसी बात जिससे आम तौर पर इनकार किया गया हो। क़ुरान ने नेकी और बुराई के लिए इन शब्दों का उपयोग इस लिए किया है क्योंकि वह कहता है संसार में विश्वास और विचारों की भिन्नता कितनी ही क्यों न हो, कुछ बातें ऐसी हैं जिनके अच्छे होने में सभी सहमत हैं, और कुछ ऐसी हैं जिनके बुरे होने में सब की एक राय है। जैसे इन बातों में सभी एक मत हैं कि सच बोलना अच्छा है और झूठ बोलना बुरा, ईमानदारी अच्छी बात है, और बेईमानी बुरी। इसमें भी किसी का मतभेद नहीं कि मातापिता की सेवा, पड़ोसियों से सद्व्यवहार, दरिद्रों की ख़बर लेना, पीड़ितों की सहायता करना, ये सब अच्छे काम हैं। और अन्याय और अत्याचार बुरे काम हैं। अर्थात् ये वे बातें हुईं जिनकी अच्छाई आम तौर पर जानी बूझी हुई हैं और जिनके विरुद्ध चलना आम तौर पर अनुचित और निन्दनीय है। संसार के सब धर्म, संसार के सब आचार, संसार की सारी बुद्धिमत्ता, संसार के सब समाज, दूसरी बातों में चाहे जितना मतभेद रखते हों, लेकिन जहां तक इन कामों का सम्बन्ध है सब एक मत हैं।

क़ुरान कहता है, ईश्वरीय धर्म उन्हीं कामों को मनुष्य का आवश्यक कर्तव्य क़रार देता है जिनकी अच्छाई आम तौर पर मनुष्यसमाज ने समझ ली है। इसी तरह उन सब कामों को

ईश्वरीय धर्म निषिद्ध क़रार देता है जिन्हें आम तौर पर लोग अस्वीकार करते हैं और जिन्हें बुरा कहने में सभी धर्म सहमत हैं। यह बात चूँकि धर्म का मौलिक तत्त्व थी इसलिए इसमें मतभेद न हो सका और विविध मज़हबी गिरोहों में अगणित गुमराहियों के होते हुए तथा उनके अनेक सच्चाइयों को भुला देने पर भी, यह सच्चाई सदा प्रकट और सर्वमान्य बनी रही। इन कामों की अच्छाई और बुराई पर संसार भर के अन्दर सब युगों, सब धर्मों, और सब कौमों के लोग सहमत हैं, इसी से इन बातों की इलहामी अस्लीयत अर्थात् उनका ईश्वर की ओर से मनुष्य को आदेश होना साबित होता है। इसलिए जहाँ तक कर्मों का सम्बन्ध है, .क़ुरान उन्हीं बातों के करने की आज्ञा देता है जिनकी अच्छाई सब की जानी हुई है और उन्हीं बातों से रोकता है जिनसे आमतौर पर मनुष्यमात्र ने इनकार किया है, यानी 'मारूफ़' की आज्ञा देता है, और 'मुनकर' से रोकता है। इसलिए .कुरान कहता है कि जब मेरे उपदेश का यह हाल है तो फिर किसी भी व्यक्ति को, जिसको नेकी और सच्चाई से विरोध नहीं, मुझसे विरोध क्यों हो?

.कुरान कहता है, यही कर्ममार्ग मनुष्यसमाज के लिए ईश्वर-निर्द्धारित प्राकृतिक धर्म (दीन) है, और प्रकृति के नियमों में कभी अन्तर नहीं पड़ सकता, और यही 'अद्दीनुल् कय्यिम' यानी सीधा और दुरुस्त धर्म है, जिसमें किसी प्रकार का टेढ़ापन या कच्चापन नहीं है। यही 'हनीफ़' (सीधा) धर्म है, जिसका उपदेश हज़रत इब्राहीम ने किया था। इसी का नाम .कुरान की भाषा में

'अल्-इस्लाम' है जिसका अर्थ है ईश्वर के बनाये हुए नियमों का पालन करना।

فاقم وجهک للدین حنیفا -
فطرت الله التي فطرالناس
علیها - لا تبدیل لخلق
الله - ذلک الدین القیم -
و لکن اکثر الناس لا یعلمون -
منیبین الیه و اتقوه و
اقیموا الصلوة و لا تکونوا من
المشرکین من الذین فرقوا
دینهم و کانوا شیعا - کل حزب
بما لدیهم فرحون

धर्म (दीन) की राह में हर तरफ़ से मुँह फेर कर सिर्फ़ एक परमात्मा ही की तरफ़ रुख़ कर लो। यही ईश्वरनिर्द्धारित प्रकृति है जिसके अनुसार उसने मनुष्य को पैदा किया है, इसमें कभी परिवर्तन नहीं होता। यही धर्म का सीधा मार्ग है। लेकिन प्रायः मनुष्य ऐसे हैं जो इसे नहीं जानते। उसी (एक परमात्मा) की ओर दृष्टि लगाये रखो, उसकी अवज्ञा से बचो। नमाज़ क़ायम करो और मुश्रिकों में से न हो जाओ, जिन्होंने अपने धर्म के टुकड़े टुकड़े करके अलग अलग गिरोह-बन्दियां कर लीं। हर गिरोह के पास जो कुछ है वह उसी में मग्न है। (सू० ३०, आ० ३०-३२)

.कुरान कहता है, ईश्वर का ठहराया हुआ धर्म (दीन) जो कुछ है वह यही है। इसके सिवा जो कुछ बना लिया गया है वह मनुष्य की गढ़ी हुई गिरोहबन्दियों का फल है। इसलिए अगर तुम ईश्वरोपासना के तत्त्व पर, जो तुम सब के यहां धर्म की जड़ है, एकत्र हो जाओ और अपनी गढ़ी हुई गुमराहियों को छोड़ दो, तो मेरा उद्देश्य पूरा हो गया। मैं इससे .ज्यादा कुछ नहीं चाहता।

ان الدين عند الله الاسلام - و ما اختلف الذين اوتوا الكتاب الا من بعد ما جاءهم العلم بغيا بينهم- و من يكفر بايات الله فان الله سريع الحساب - فان حاجوک فقل اسلمت وجهي لله و من اتبعن - و قل للذين اوتوا الكتاب و الاميين ء اسلمتم فان اسلموا فقد اهتدوا - و ان تولوا فانما عليک البلاغ - و الله بصير بالعباد

परमात्मा के नजदीक धर्म एक ही है, और वह 'अल्-इस्लाम' है, और यह जो धर्म-ग्रन्थ वालों ने विभिन्नता डाल दी (एक धर्म पर एकत्र रहने की जगह यहूदीमत और ईसाईमत की गिरोहबन्दियों में बट गये), यह इसलिए हुआ कि यद्यपि ज्ञान और सत्य की राह उन पर खुल चुकी थी लेकिन आपस की ज़िद और विद्रोह के कारण अलग हो गये। (स्मरण रखो) जो कोई ईश्वर की आज्ञाओं से इनकार करता है, ईश्वर के कर्मफल-सम्बन्धी नियम भी उससे हिसाब

लेने में वैसे ही तेज़ हैं। फिर अगर यह लोग तुमसे इस बारे में झगड़ा करें तो (ऐ पैग़म्बर !) तुम उनसे कहो कि मेरी और मेरे अनुयायियों की राह तो ईश्वर के आगे बन्दगी में सर झुका देना है और हमने सर झुका दिया है। फिर धर्मग्रन्थ-वालों से और अशिक्षित लोगों से (यानी अरब के मुश्रिकों से) पूछो कि तुम भी परमात्मा के आगे झुकते हो या नहीं (यानी झगड़े की सारी बातें छोड़ो और यह बतलाओ कि तुमको ख़ुदा-परस्ती स्वीकार है या नहीं) ? अगर वे झुक गये तो (सारा झगड़ा ख़त्म हो गया और) उन्होंने राह पा ली, अगर वे मुंह मोड़ें तो (फिर जिन लोगों को ईश्वरभक्ति की ऐसी स्पष्ट बातों से भी इनकार है उनके साथ वादविवाद और कलह करने से

क्या लाभ) ? तुम्हारे ज़िम्मे जो कुछ है वह यही है कि सत्य का सन्देश पहुँचा दो, (बाक़ी सब कुछ परमात्मा पर छोड़ दो। परमात्मा से बन्दों का हाल छिपा नहीं है। (सू० ३, आ० १८, १९)

.कुरान ने धर्म के लिए 'अल्-इस्लाम' शब्द का इसलिए उपयोग किया है कि 'इस्लाम' का अर्थ किसी बात को मान लेने और आज्ञापालन करने का है। .कुरान कहता है कि धर्म की अस्लीयत यही है कि ईश्वर ने जो कल्याण का मार्ग मनुष्य के लिए निश्चत कर दिया है उसका ठीक ठीक अनुसरण किया जाय। वह कहता है कि यह मार्ग केवल मनुष्य ही के लिए नहीं है बल्कि समस्त सृष्टि इसी नियम पर क़ायम है। सब की स्थिरता और उनके क़ायम रहने के लिए ईश्वर ने कोई न कोई कर्ममार्ग स्थिर कर दिया है, और सब उसी का अनुसरण करते हैं। यदि एक क्षण के लिए भी वे उससे विमुख हों तो सारी सृष्टि छिन्नभिन्न हो जाय।

افغير دين الله يبغون و
له اسلم من في السموت و

फिर क्या ये लोग चाहते हैं कि परमात्मा का ठहराया हुआ

الارض طوعا و كرها و اليه
يرجعون

धर्म छोड़ कर कोई दूसरा धर्म खोज निकालें जब कि पृथ्वी और आकाश में जितने प्राणी हैं सब, चाहें या न चाहें, उसी के ठहराये हुए कर्ममार्ग पर चल रहे हैं और (अन्त में) सब को उसी की ओर लौटना है। (सू० ३, आ० ८२)

क़ुरान जब कहता है कि 'अल्-इस्लाम' के अतिरिक्त और कोई धर्म परमात्मा के निकट मान्य नहीं तो इसका मतलब यही होता है कि उस ईश्वरीय धर्म के सिवा जो एक ही है और जिसकी शिक्षा समस्त पैग़म्बरों ने समान रूप से दी है मनुष्यनिर्मित कोई भी गिरोहबन्दी मान्य नहीं हो सकती। सूरा ३ में, जहां यह वर्णन आया है कि ईश्वरीय धर्म का मार्ग सभी धर्मप्रवर्त्तकों का समर्थन करने और उनका अनुसरण करने का मार्ग है, वहीं साथ साथ यह भी कहा गया है—

و من يبتغ غير الاسلام
دينا فلن يقبل منه - و هو
فى الاخرة من الخاسرين

और जो कोई इस्लाम के सिवा (जो विश्वव्यापी सत्य और सब के समर्थन का मार्ग है) कोई दूसरा धर्म चाहेगा, तो

याद रखो, उसकी राह कभी
स्वीकार नहीं की जायगी, और
वह अन्त में देखेगा कि उसका
स्थान लाभ उठानेवालों में नहीं,
बल्कि नुक़सान उठानेवालों में
है। (सू० ३, आ० ८४)

इसीलिए क़ुरान अपने समस्त अनुयायियों को बार बार सावधान करता है कि धर्म में भेद डालने और गिरोहबन्दी करने से बचो, और फिर से उसी गुमराही में न पड़ जाओ जिससे मैंने तुम्हें छुटकारा दिलाया है। क़ुरान कहता है कि मेरे उपदेश ने मनुष्यमात्र को, जो धर्म के नाम पर एक दूसरे के शत्रु हो रहे थे, ईश्वरनिष्ठा के मार्ग में इस तरह मिला दिया कि वे एक दूसरे के लिए प्राण न्योछावर करनेवाले भाई भाई बन गये। एक यहूदी जो पहले हज़रत ईसा का नाम सुनते ही घृणा से भर जाता था, एक ईसाई जो हर यहूदी के ख़ून का प्यासा था, एक पारसी जिसके नज़दीक सब ग़ैर-पारसी अपवित्र थे, एक अरब जो अपने सिवा सब को सभ्यता और गुणों से वञ्चित समझता था, एक साबी जो यह विश्वास करता था कि संसार का सनातन सत्य सिर्फ़ मेरे ही हिस्से में पड़ा है, इन सब को क़ुरान के उपदेश ने एक पंक्ति में खड़ा कर दिया, और अब यह सब परस्पर घृणा करने के बदले एक दूसरे के धर्मप्रवर्तकों का समर्थन करते हैं, और सब की बतलाई हुई सर्वसम्मत हिदायत पर चलते हैं।

और (देखो), सब मिल जुल कर परमात्मा की रस्सी मज़बूती से पकड़ लो और पृथक् पृथक् न हो। परमात्मा ने तुम्हारे ऊपर जो दया और अनुकम्पा की है उसे स्मरण रखो। तुम्हारा हाल यह था कि एक दूसरे के शत्रु हो रहे थे, लेकिन ईश्वर ने तुम्हारे हृदय में पारस्परिक प्रेम उत्पन्न कर दिया, फिर ऐसा हुआ कि तुम भाई भाई हो गये और (देखो), तुम्हारा तो यह हाल था कि मानो धधकती आग के गड्ढे के किनारे खड़े थे लेकिन ईश्वर ने तुम्हें इस ख़तरे से बचा लिया (और जीवन तथा सफलता के राजमार्ग पर पहुँचा दिया)। परमात्मा इसी तरह अपनी निशानियों का तुम्हें परिचय दिया करता है ताकि तुम हिदायत पाओ (और गुमराही से बचो)।—सू० ३, आ० ९८।

و اعتصموا بحبل الله جميعا و لا تفرقوا - و اذكروا نعمت الله عليكم اذ كنتم اعداء فالف بين قلوبكم فاصبحتم بنعمته اخوانا - و كنتم على شفاحفرة من النار فانقذكم منها - كذلك يبين الله لكم آياته لعلكم تهتدون

و لا تكونوا كالذين تفرقوا و اختلفوا من بعد ما جاء هم البينات - و اولئک لهم عذاب عظيم

और (देखो), उन लोगों की सी चाल मत स्वीकार कर लेना जो (एक धर्म पर स्थिर रहने के बदले) अलग अलग हो गये और जिन्होंने आपस में विरोध पैदा कर लिये, यद्यपि प्रमाण उनके सामने आ चुके थे। (याद रखो) यह वे लोग हैं जिनके लिए (सफलता और कल्याण की जगह) भयंकर कष्ट है। (सू० ३, आ० १०१)

و ان هذا صراطى مستقيما فاتبعوه - و لا تتبعوا السبل فتفرق بكم عن سبيله - ذلكم وصيكم به لعلكم تتقون

और (देखो), यह मेरी राह है बिलकुल सीधी राह, इसलिए इसी एक राह पर चलो और तरह तरह के मार्गों के पीछे न पड़ो। वे तुम्हें ईश्वरीय मार्ग से हटा कर पृथक् पृथक् कर देंगे। यही बात है जिसके लिए ख़ुदा तुम्हें आज्ञा देता है ताकि तुम अवज्ञा से बचो। (सू० ६, आ० १५५)

६। .कुरान और उसके विरोधियों में झगड़े का कारण।

अब थोड़ी देर के लिए उस झगड़े की ओर ध्यान दीजिए जो .कुरान और उसके विरोधियों में उत्पन्न हो गया था। ये विरोधी कौन थे? ये पिछले धर्मों के अनुयायी थे, जिनमें से कुछ के पास धर्म-ग्रन्थ थे और कुछ के पास नहीं थे।

झगड़े का कारण क्या था? क्या यह कारण था कि .कुरान ने उन धर्मों के संस्थापकों और पथ-प्रदर्शकों को झूठा कहा था, या उनके पवित्र धर्म-ग्रन्थों से इनकार किया था, और इसलिए वे उसका विरोध करने पर कटिबद्ध हो गये थे?

क्या यह कारण था कि .कुरान ने इस बात का दावा किया कि ईश्वरीय सत्य केवल मेरे ही हिस्से पड़ा है, और अन्य समस्त धर्मों के अनुयायियों को उचित है कि वे अपने अपने धर्मों को छोड़ दें?

या, फिर .कुरान ने धर्म के नाम पर कोई ऐसी बात उपस्थित कर दी थी जो अन्य धर्मानुयायियों के लिए बिलकुल नई थी, और इस कारण .कुरान को मानने में उन्हें आपत्ति थी?

.कुरान के पृष्ठ खुले हुए हैं, और उसके आने का इतिहास भी दुनिया के सामने है। ये दोनों हमें बतलाते हैं कि ऊपर की बातों में से कोई बात भी न थी, और न हो सकती थी। .कुरान ने न

केवल उन सारे धर्मसंस्थापकों को प्रमाण माना, जिनके नामलेवा उसके सामने थे, बल्कि साफ़ शब्दों में कह दिया कि मुझसे पहले जितने भी रसूल और धर्म-प्रवर्तक आ चुके हैं, मैं सबको प्रमाण मानता हूँ, और उनमें से किसी एक के न मानने को भी ईश्वरीय सत्य से इनकार करना समझता हूँ। उसने किसी धर्मवाले से यह नहीं चाहा कि वह अपने धर्म को छोड़ दे, बल्कि जब कभी चाहा तो यही चाहा कि सब अपने अपने धर्मों की वास्तविक शिक्षा पर अमल करें, क्योंकि समस्त धर्मों की वास्तविक शिक्षा एक ही है। न तो उसने कोई नवीन सिद्धान्त उपस्थित किया, और न कोई नवीन कार्य-पद्धति ही बतलाई। उसने सदा उन्हीं बातों पर ज़ोर दिया जो संसार के समस्त धर्मों की सबसे ज़्यादा जानी बूझी हुई बातें रही हैं—यानी एक जगदीश्वर की उपासना और सदाचरण का जीवन। उसने जब कभी लोगों को अपनी ओर बुलाया है, तो यही कहा है कि अपने अपने धर्मों की वास्तविक शिक्षा को फिर से ताज़ा कर लो, तुम्हारा ऐसा करना ही मुझे क़बूल कर लेना है।

प्रश्न यह है कि जब क़ुरान के उपदेशों का यह हाल था तो फिर आख़िर उसमें और उसके विरोधियों में झगड़े का क्या कारण हुआ? जो व्यक्ति किसी को बुरा नहीं कहता, सबको मानता और सबकी इज़्ज़त करता है, और हमेशा उन्हीं बातों का उपदेश करता है जो सबके यहां मानी हुई हैं, उससे कोई लड़े तो क्यों लड़े? और क्यों लोगों को उसका साथ देने से इनकार हो?

कहा जा सकता है कि मक्के के क़ुरैशों * का विरोध इस आधार पर था कि क़ुरान ने मूर्ति-पूजा से इनकार कर दिया था, और वे मूर्ति-पूजा से प्रेम रखते थे। निस्सन्देह विरोध का कारण एक यह भी था; लेकिन सिर्फ़ यही कारण नहीं हो सकता। प्रश्न यह होता है कि यहूदियों ने क्यों विरोध किया, जो मूर्ति-पूजा से बिलकुल अलग थे? ईसाई क्यों विरोधी हो गये। उन्होंने तो कभी मूर्ति-पूजा की हिमायत का दावा नहीं किया?

असल बात यह है कि इन धर्मों के अनुयायियों ने क़ुरान का विरोध इसलिए नहीं किया कि वह उन्हें झूठा क्यों बतलाता था, बल्कि इसलिए किया कि वह उन्हें झूठा क्यों नहीं कहता था। हर धर्म का अनुयायी यह चाहता था कि क़ुरान केवल उसी को सच्चा कहे, बाक़ी सबको झूठा कहे, और चूँकि क़ुरान सबका समानरूप से समर्थन करता था, इसीलिए कोई उससे प्रसन्न नहीं हो सकता था। यहूदी इस बात से तो बहुत प्रसन्न थे कि क़ुरान हज़रत मूसा को प्रमाण मानता है। लेकिन वह सिर्फ़ इतना ही नहीं करता था, वह हज़रत ईसा को भी प्रमाण मानता था, और यहीं आकर उसके और यहूदियों के बीच विरोध खड़ा हो जाता था। ईसाइयों को इस पर क्या आपत्ति हो सकती थी कि हज़रत ईसा और हज़रत मरियम की शुचिता और सच्चाई की घोषणा की जाय? लेकिन क़ुरान सिर्फ़ इतना ही नहीं कहता था, वह यह भी कहता था कि मुक्ति

* 'क़ुरैश' मक्के में रहनेवाला एक वंश, जिसमें मुहम्मद पैदा हुए। यही लोग काबे के पुजारी थे।

का दार-मदार मनुष्यों के अपने कर्मों पर है, न कि हज़रत ईसा की क़ुरबानी और बपतिस्मे पर। किन्तु मुक्ति का यह व्यापक नियम ईसाई सम्प्रदाय के लिए असह्य था।

इसी प्रकार मक्का के क़ुरैशों के लिए इससे बढ़कर प्रसन्नता की बात और कोई नहीं हो सकती थी कि हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल का महत्व स्वीकार किया जाय। लेकिन जब वे देखते थे कि क़ुरान जिस तरह इन दोनों का महत्व स्वीकार करता है उसी तरह यहूदियों तथा ईसाइयों के पैग़म्बरों का भी स्वीकार करता है, तो उनके जातिगत और साम्प्रदायिक अभिमान को बड़ी ठेस लगती थी। वे कहते थे कि ऐसे व्यक्ति हज़रत इब्राहीम और इस्माईल के अनुयायी कैसे हो सकते हैं, जो उनके महत्व और सच्चाई की पंक्ति में दूसरों को भी लाकर खड़ा कर देते हैं ?

सारांश यह कि क़ुरान के तीन सिद्धान्त ऐसे थे जो उसके तथा अन्य धर्मों के अनुयायियों के बीच विरोध के कारण हो गये—

(१) क़ुरान धर्म के नाम पर गिरोहबन्दी का विरोधी था, और सब धर्मों की एकता का एलान करता था। अगर अन्य धर्मों के अनुयायी यह मान लेते, तो उन्हें यह भी मानना पड़ता कि धर्म की सच्चाई किसी एक ही गिरोह के हिस्से में नहीं आई है, बल्कि सबको समानरूप से मिली है। परन्तु यही मानना उनकी साम्प्रदायिकता के लिए घातक था।

(२) क़ुरान कहता था—मुक्ति और कल्याण का दार-मदार कर्मों पर है, वंश, जाति, सम्प्रदाय, अथवा बाह्य रीति-रिवाजों पर

नहीं। यदि वे इस तथ्य को मान लेते, तो मुक्ति का द्वार बिना भेदभाव मनुष्यमात्र के लिए खुल जाता और किसी एक सम्प्रदाय की ठेकेदारी बाक़ी न रहती। लेकिन इस बात के लिए उनमें से कोई भी तय्यार न था।

(३) .कुरान कहता था, वास्तविक धर्म ईश्वरोपासना है, और ईश्वरोपासना यह है कि बिना किसी और को बीच में लाये एक परमात्मा की सीधी उपासना की जाय। लेकिन दुनिया के समस्त सम्प्रदायों ने किसी न किसी रूप में बहुईश्वरवाद और मूर्ति-पूजा के ढंग स्वीकार कर लिये थे। यद्यपि उनको इससे इनकार नहीं था कि वास्तविक धर्म ईश्वरोपासना ही है, और ईश्वर एक ही है, तथापि अपनी रूढ़ियों और प्रथाओं से अलग होना उन्हें बेतरह खलता था।

७ । सारांश

ऊपर की सारी बहस का सार इस प्रकार दिया जा सकता है—

(१) क़ुरान के आने के समय वंशों, कुटुम्बों और परिवारों के अलग अलग सामाजिक रहन-सहन की तरह संसार के धर्मों में भी अलग अलग दलबन्दियाँ कर ली गई थीं। प्रत्येक दल का आदमी यही समझता था कि धार्मिक सत्य सिर्फ़ मेरे ही हिस्से में पड़ा है। जो व्यक्ति इस धार्मिक परिधि के अंदर है, वह मुक्त है; जो बाहर है, वह मुक्ति से वंचित है।

(२) प्रत्येक दल धर्म के केवल बाह्य कर्मों और रीतियों को ही धर्म की असलीयत और उसका तथ्य समझता था। ज्योंही कोई व्यक्ति इन बाह्य रीति रिवाजों को अंगीकार कर लेता, त्यों ही यह विश्वास कर लिया जाता कि मुक्ति और कल्याण उसे प्राप्त हो गया—जैसे, उपासना की एक विधिविशेष, क़ुरबानियों के रीति-रिवाज, किसी विशेष प्रकार का भाजन करना या न करना, किसी विशेष वेश-भूषा को स्वीकार करना या न करना।

(३) चूँकि ये रीति-रिवाज प्रत्येक सम्प्रदाय में भिन्न-भिन्न थे, इसलिए प्रत्येक धर्म का अनुयायी विश्वास करता था कि दूसरे सम्प्रदाय वालों के पास धार्मिक सच्चाई नहीं है, क्योंकि उनके कर्म और रीति-रिवाज वैसे नहीं हैं, जैसे मेरे हैं।

(४) प्रत्येक सम्प्रदाय का दावा सिर्फ़ यही नहीं था कि वह सच्चा है, बल्कि यह भी था कि दूसरा झूठा है। परिणाम यह था कि हर सम्प्रदाय केवल अपनी सच्चाई की घोषणा करके ही सन्तोष नहीं करता था, बल्कि दूसरों के विरुद्ध पक्षपात और घृणा फैलाना भी आवश्यक समझता था। इस परिस्थिति ने मनुष्यों को निरन्तर लड़ाई झगड़ों में फँसा रखा था। धर्म और ईश्वर के नाम पर प्रत्येक गिरोह दूसरे गिरोह से घृणा करता और उसका ख़ून बहाना जायज़ समझता था।

(५) लेकिन क़ुरान ने मनुष्यमात्र के सम्मुख नये सिरे से इस सिद्धान्त को उपस्थित किया कि धर्म की सच्चाई विश्वव्यापी सच्चाई है।

(क) उसने सिर्फ़ यही नहीं बतलाया कि प्रत्येक धर्म में सच्चाई है, बल्कि यह भी साफ़ साफ़ कह दिया कि सभी धर्म सच्चे हैं। उसने कहा कि धर्म परमात्मा की एक ऐसी देन है जो सबको समान रूप से प्राप्त है, इसलिए सम्भव नहीं कि यह देन किसी एक जाति या गिरोह ही को दी गई हो और दूसरों का इसमें कोई हिस्सा न हो।

(ख) उसने कहा कि परमात्मा के समस्त प्राकृतिक नियमों की तरह मनुष्य के आध्यात्मिक कल्याण का नियम भी एक ही है, और सबके लिए है। इसलिए विविध धर्मों के अनुयायियों की सबसे बड़ी भूल यह है कि उन्होंने ईश्वरीय धर्म की एकता को भूलकर अपने अपने अलग अलग गिरोह

बना लिये हैं, और हर गिरोह दूसरे गिरोह से लड़ रहा है।

(ग) क़ुरान ने बतलाया कि ईश्वरीय धर्म इसलिए था कि मनुष्य-समाज के परस्पर भेदभाव और झगड़े दूर हों, इसलिए न था कि वह स्वयं विरोध और लड़ाई का कारण बन जाय, इसलिए इससे बढ़कर गुमराही और क्या हो सकती है कि जो वस्तु भेदों को दूर करने आई थी, वही भेदों की जड़ बना ली गई ?

(घ) उसने बतलाया कि धर्म एक चीज़ है, और विधि-विधान दूसरी। धर्म एक ही है, और एक प्रकार से सबको दिया गया है। हाँ, विधि-विधान में भेद हुआ है, और यह भेद अनिवार्य था, क्योंकि हर युग और हर जाति की अवस्था एक सी नहीं थी। यह आवश्यक था कि जैसी जिसकी अवस्था हो, उसी के अनुसार विधि और व्यवस्था उसे बताई जाय। इसलिए विधि-विधान के भिन्न भिन्न होने से असली धर्म भिन्न भिन्न नहीं हो सकता। तुमने धर्म के तत्त्व को तो भुला दिया है और केवल विधि-विधान के भेदों को लेकर एक दूसरे को झूठा कह रहे हो।

(च) उसने बतलाया कि तुम्हारी धार्मिक दलबन्दियों और उनके वाह्य रीति-रिवाज का मनुष्य की मुक्ति और कल्याण के साथ कोई सम्बन्ध नहीं। ये दलबन्दियां तुम्हारी बनाई हुई हैं। ईश्वर का ठहराया हुआ धर्म तो एक ही है, और वह सच्चा धर्म क्या है ? क़ुरान बताता है—एक ईश्वर की उपासना और सदाचरण का जीवन। जो व्यक्ति भी ईश्वर पर विश्वास रखेगा और

सदाचरण का मार्ग ग्रहण करेगा, उसके लिए मुक्ति है, चाहे वह तुम्हारी गिरोहबन्दी में शामिल हो, या न हो।

(छ) क़ुरान ने साफ़ साफ़ शब्दों में घोषित कर दिया कि उसके उपदेशों का उद्देश्य इसके सिवा और कुछ नहीं कि सभी धर्मों के अनुयायी अपने सर्वसम्मत और सर्वस्वीकृत सत्य पर एकत्र हो जायँ। वह कहता है कि सभी धर्म सच्चे हैं, लेकिन उनके अनुयायी सच्चाई के रास्ते से भटक गये हैं। अगर वे अपनी भूली हुई सचाई फिर से अख्तियार कर लें, तो मेरा काम पूरा हो गया, और उन्होंने मुझे क़बूल कर लिया। सभी धर्मों की यही सर्वसम्मत और सर्वस्वीकृत सच्चाई है जिसे क़ुरान अल्-दीन (अद्दीन) और 'अल्-इस्लाम' के नाम से पुकारता है।

(ज) क़ुरान कहता है, ईश्वर का धर्म इसलिए नहीं है कि एक मनुष्य दूसरे से घृणा करे, बल्कि इसलिए है कि प्रत्येक मनुष्य दूसरे से प्रेम करे और सब एक ही परमपिता के भक्ति-सूत्र में बँध कर एक हो जायँ। वह कहता है, जब सबका पालनकर्ता एक है, जब सब का लक्ष्य उसी की भक्ति है, जब प्रत्येक व्यक्ति के लिए वही होना है, जैसा कि उसका कर्म है, तो फिर ईश्वर और धर्म के नाम पर ये समस्त विरोध और लड़ाइयाँ क्यों हैं?

(६) संसार के धर्मों की परस्पर भिन्नता केवल भिन्नता तक ही परिमित नहीं रही, बल्कि पारस्परिक घृणा और शत्रुता का भी साधन बन गई है। प्रश्न यह है कि यह शत्रुता दूर कैसे हो?

यह तो हो नहीं सकता कि सब धर्मों के अनुयायी अपने दावे में सच्चे मान लिये जायँ, क्योंकि प्रत्येक धर्म का अनुयायी सिर्फ़ यही दावा नहीं करता कि मैं सच्चा हूँ, बल्कि यह भी दावा करता है कि दूसरे झूठे हैं। इसलिए अगर उन सब के दावे मान लिये जायँ, तो मान लेना पड़ेगा कि हर धर्म एक ही समय में सच्चा भी है और झूठा भी। यह भी नहीं हो सकता है कि सबको झूठा क़रार दिया जाय, क्योंकि अगर सब धर्म झूठे हैं, तो फिर धार्मिक सत्य है कहाँ? इसलिए यदि कोई तरीक़ा झगड़ा मिटाने का हो सकता है, तो वह वही है जिसका उपदेश लेकर क़ुरान प्रकट हुआ है। सारे धर्म सच्चे हैं, क्योंकि वास्तविक धर्म एक ही है, और वह सबको दिया गया है, लेकिन समस्त धर्मों के अनुयायी धार्मिक सत्य से अलग हो गये हैं, क्योंकि उन्होंने धर्म की वास्तविकता और उसकी एकता नष्ट कर दी है, और अपनी गुमराही से अलग अलग टोलियाँ बना ली हैं। अगर इस गुमराही से लोग हट जायँ और अपने अपने धर्म की वास्तविक शिक्षा को अपना लें, तो सब धार्मिक झगड़े स्वयं मिट जायँगे। प्रत्येक गिरोह देख लेगा कि उसका मार्ग भी वास्तव में वही है जो और गिरोहों का है। क़ुरान कहता है कि सभी धर्मों का यही सर्वसम्मत और सर्वस्वीकृत सत्य 'अद्दीन' है, यानी मनुष्यजाति के लिए यही वास्तविक धर्म है और इसी को वह 'अल्-इस्लाम' के नाम से पुकारता है।

(७) मनुष्य-जाति के पारस्परिक प्रेम और ऐक्य के जितने भी सम्बन्ध हो सकते थे, सब मनुष्यों के ही हाथों टूट चुके। सब की

नसल एक थी, परन्तु हज़ारों हो गईं। सबकी जाति एक थी, परन्तु असंख्य जातियाँ बन गईं। सबका जन्मस्थान एक ही था, पर वे अलग अलग देशों में बट गये। सब का दरजा एक था, लेकिन अमीर और ग़रीब, कुलीन तथा अकुलीन, ऊँच और नीच बहुत सी श्रेणियाँ बना ली गईं। ऐसी अवस्था में वह कौन सा सम्बन्ध है जो इन सब विभिन्नताओं और विषमताओं को मिटा कर मनुष्यमात्र को एक ही पंक्ति में ला खड़ा कर सकता है? क़ुरान कहता है कि वह सम्बन्ध ईश्वर-भक्ति का सम्बन्ध है, जो मनुष्य के बिछड़े हुए परिवार को फिर से एकत्र कर दे सकता है। यह विश्वास कि हम सब का पालनकर्ता एक ही है, और हम सब के सिर उसी एक की चौखट पर झुके हुए हैं, ऐक्य और प्रेम के ऐसे भाव हममें उत्पन्न कर देता है कि मनुष्य-निर्मित भेदों का उन पर विजयी हो सकना सर्वथा असम्भव है।